॥ श्रीनाथ जी ॥

दैविजीवोद्धारप्रयत्नात्मा, श्रीगोवर्द्धनधरणधीर

श्रीनाथ जी की प्राकट्य वार्ता

गो. श्री हरिराय महानुभावकृत

तथा

श्रीमद्वल्लभाचार्य का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूज्यपाद आचार्यवर्य्य गो. ति.
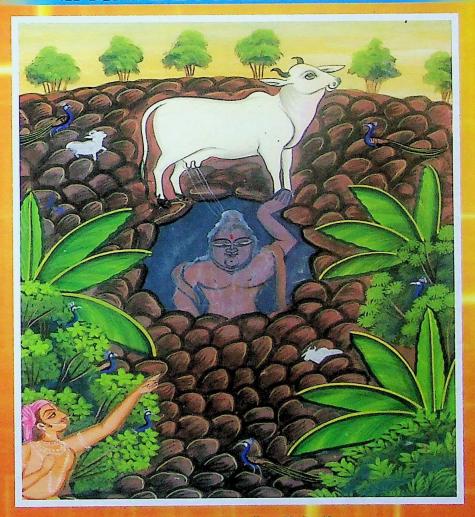
श्री १०८ श्री इन्द्रदमनजी (श्री राकेश जी) महाराज श्री की आज्ञा से प्रकाशित

प्रकाशक : विद्याविभागाध्यक्ष, मन्दिर मण्डल, श्री नाथद्वारा
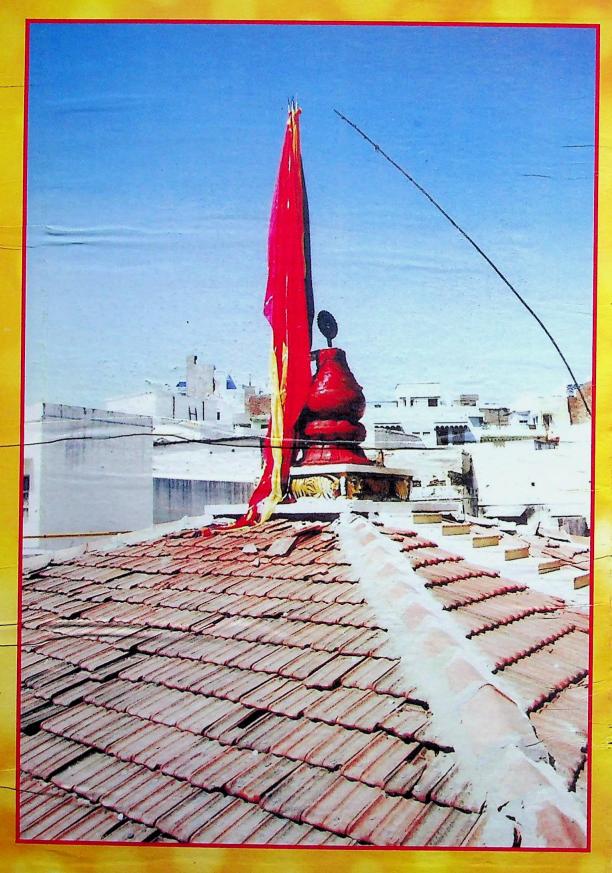
मूल्य: रु.30/-

अखण्डभूमण्डलाचार्य जगद्गुरू महाप्रभु

श्रीमद्वल्लभाचार्यजी
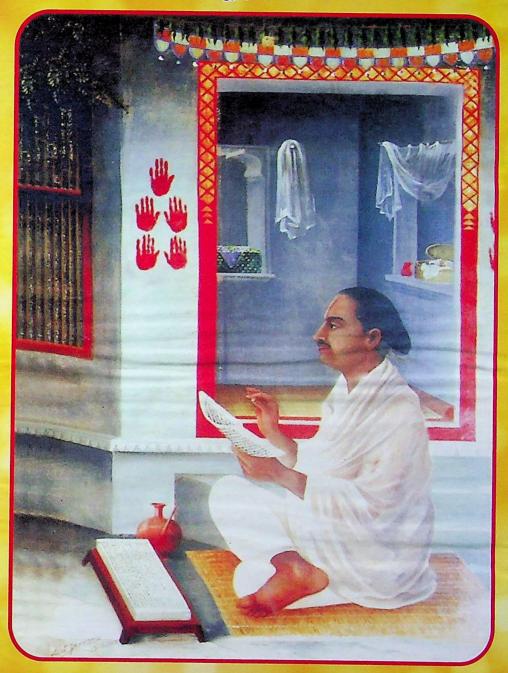
मीमांसाद्वितयेऽपि यैर्विरचितं वर्वर्ति भाष्यद्वयं
येषां कापि सुबोधिनीति विवृतिर्वैयासिके: सूक्तिषु ।।
ग्रन्था : सन्ति च यै:कृता सुबहवस्तत्वार्थदीपादय-
स्ते श्री पुष्टिपथप्रकाशनपरा: श्रीवल्लभाचार्या इमे ।।१।।

आचार्य वर्य्य गोस्वामि तिलकायित

श्री १०८ श्री इन्द्रदमन जी (श्री राकेश जी) महाराज श्री
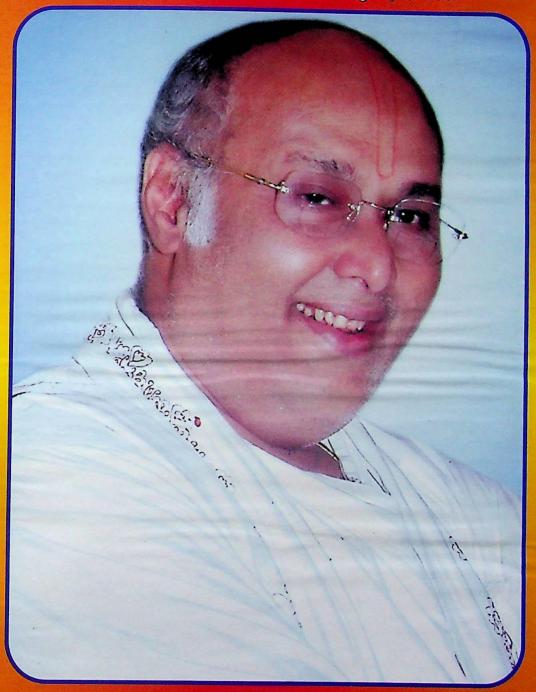
नाथद्वारा

जन्म दिनांक +- फाल्गुन शुक्ल ७
विक्रम संवत् - २००६

जन्म दिनांक : २४ फरवरी
सन् - १९५०

गो.चि. श्री १०५ श्री भूपेश कुमार जी (श्री विशाल बावा)

नाथद्वारा

प्राकट्य	जन्म तिथि
पौष कृष्ण ३०, वि.सं. २०३७	५ जनवरी १९८१

गोस्वामी श्री गोपीनाथजी

जन्म तिथि आश्विन कृष्ण १२ वि. सं. १५६७

गोस्वामी तिलकायत श्री पुरुषोत्तमजी
जन्म तिथि आश्विन कृष्ण १ वि. सं. १५८८
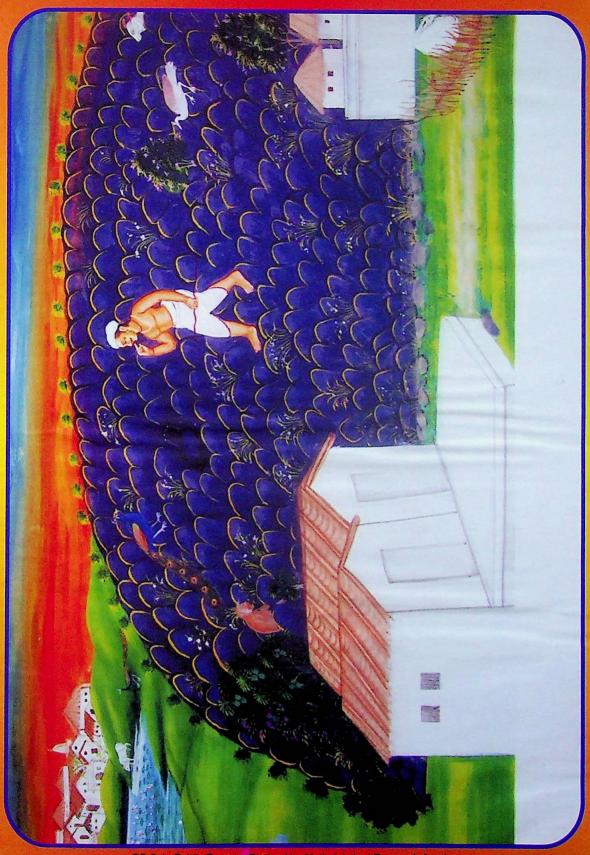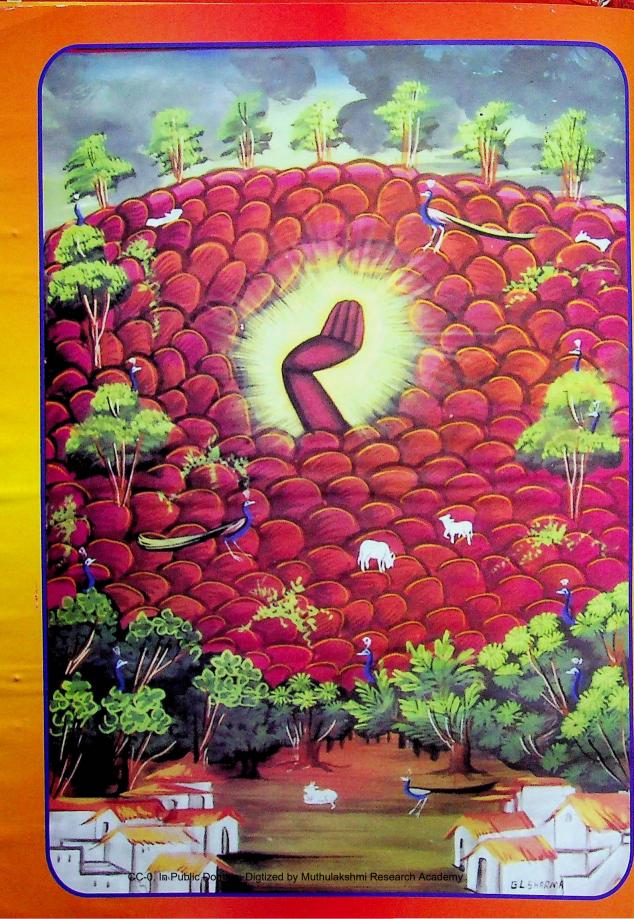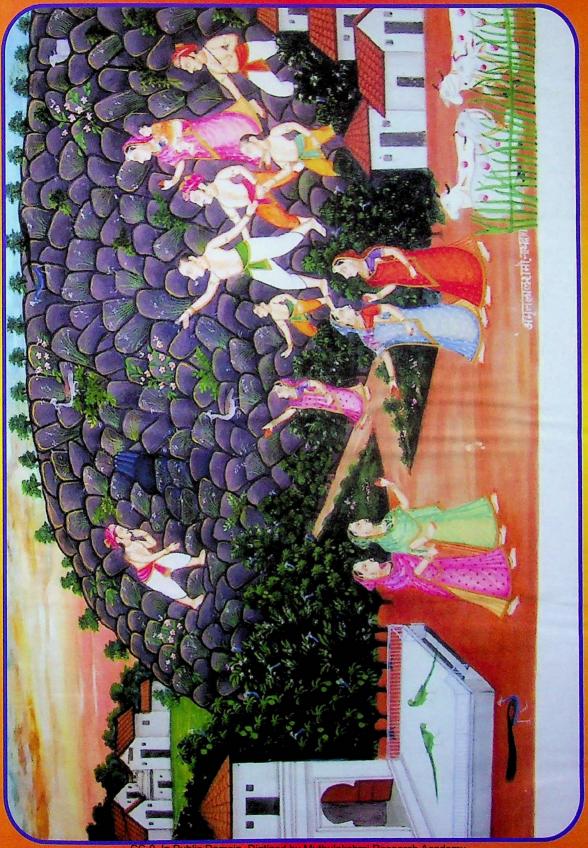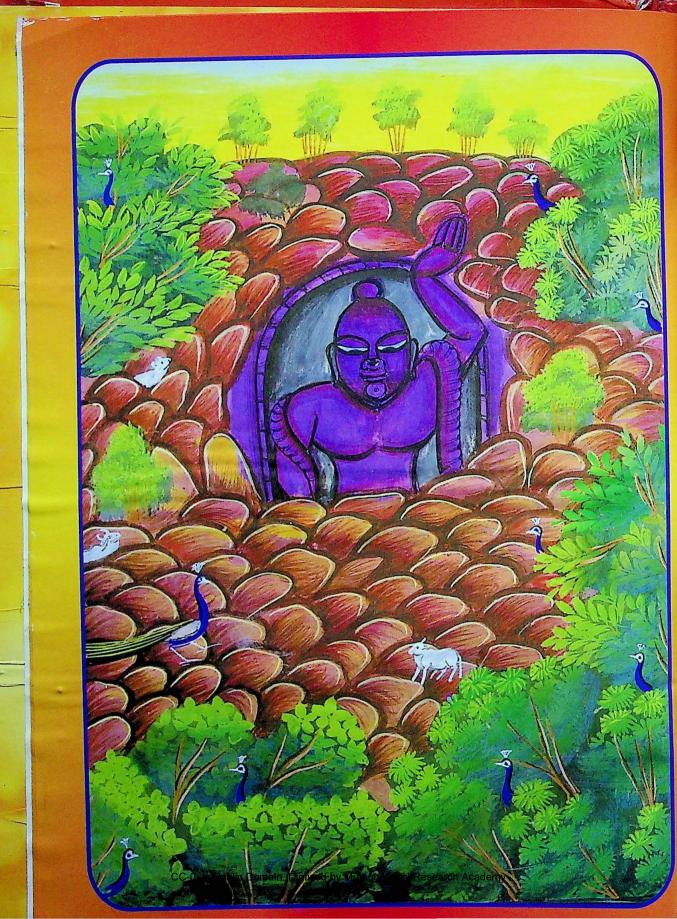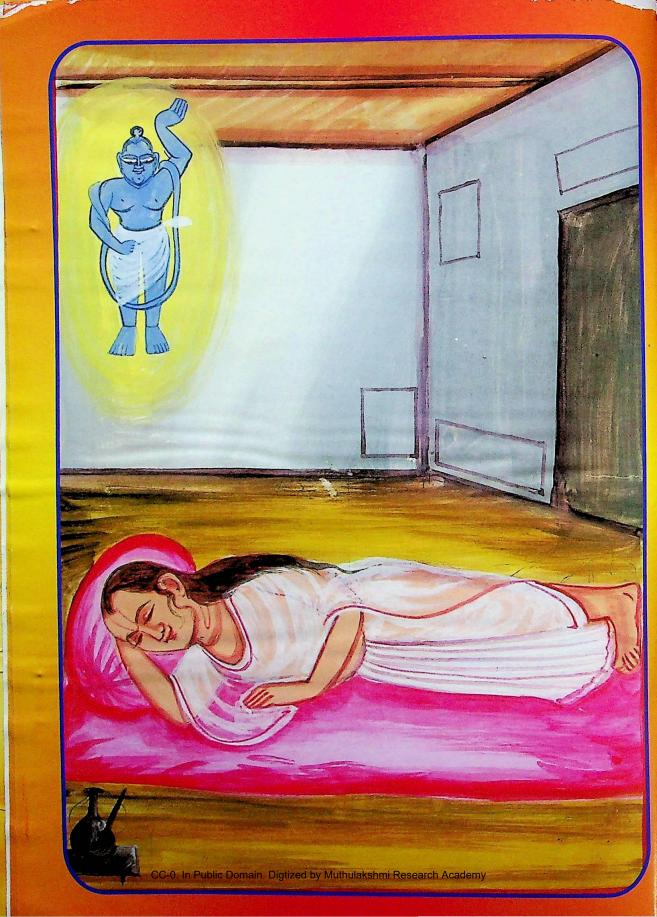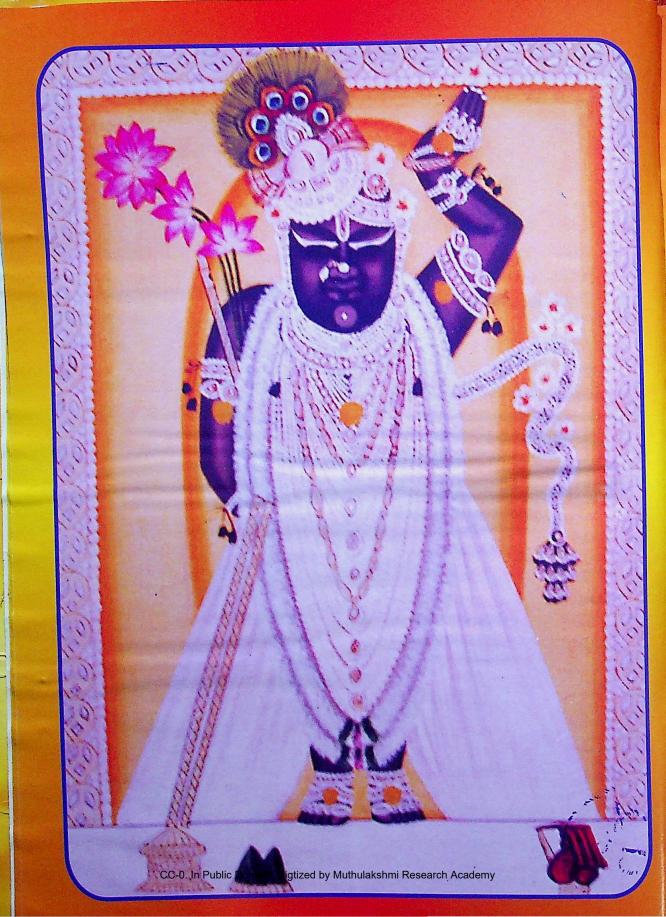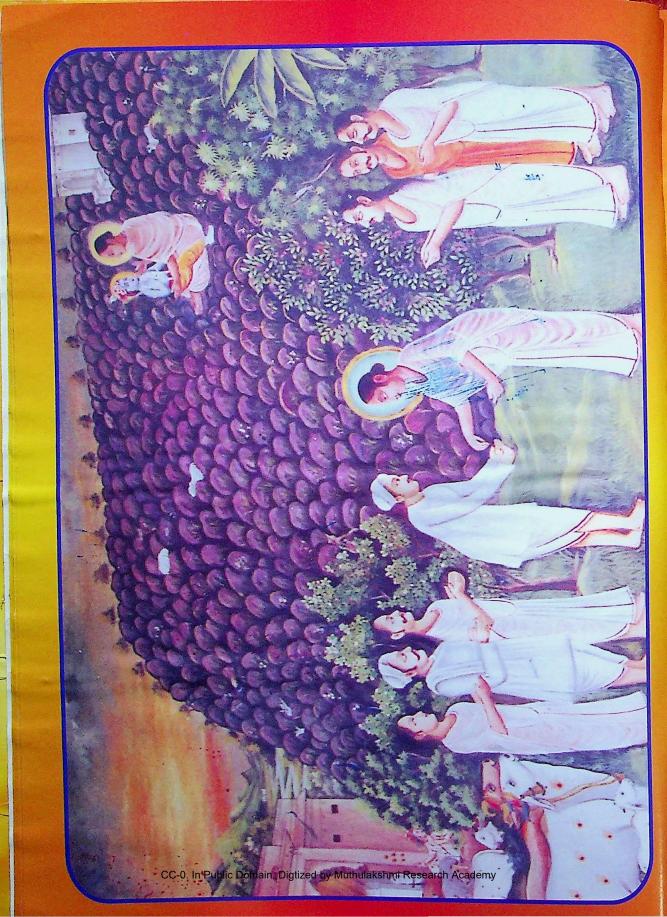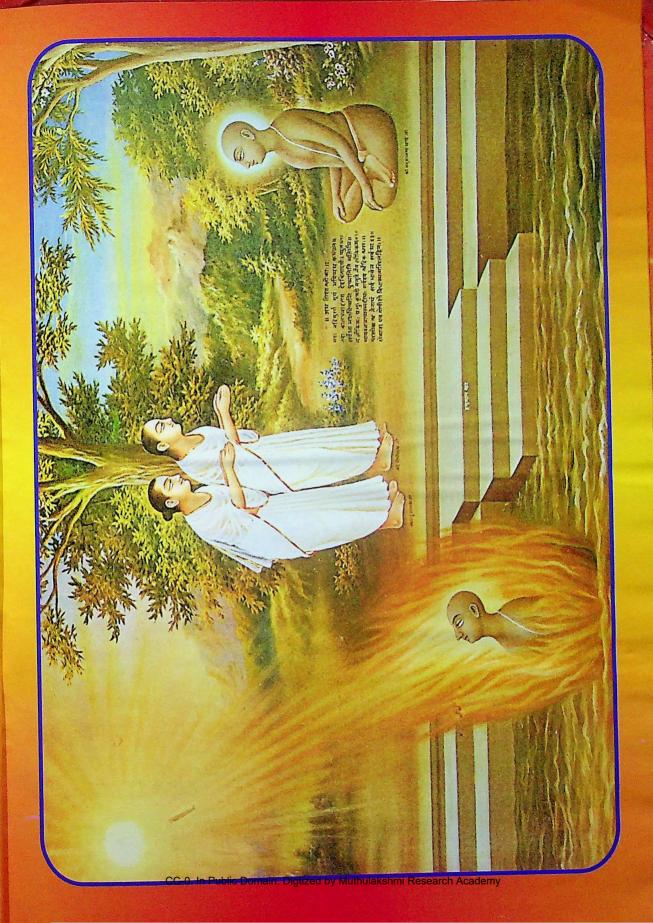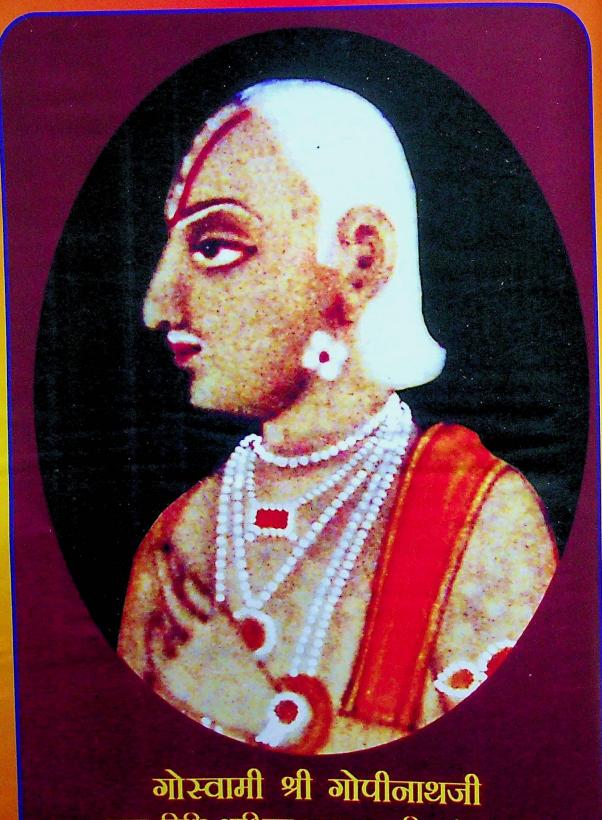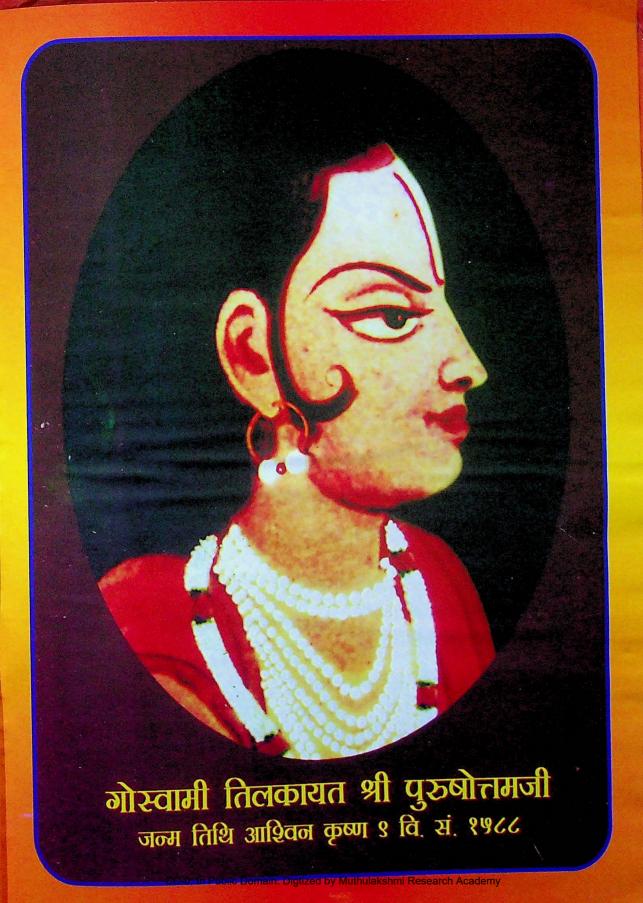
गोस्वामी श्री गुसांईजी (श्री विठ्लनाथजी)

जन्म तिथि पौष कृष्ण ९ वि. सं. १५७२

अति बन विपुन में छाक लीला रची ॥
गोप बहुईन के कुंवर उड्गन लसत, बीच ब्रज चन्द्र मानो सरद सोभा रची ॥

चित्रकार - गोविन्द S/o लालाराम जी शर्मा
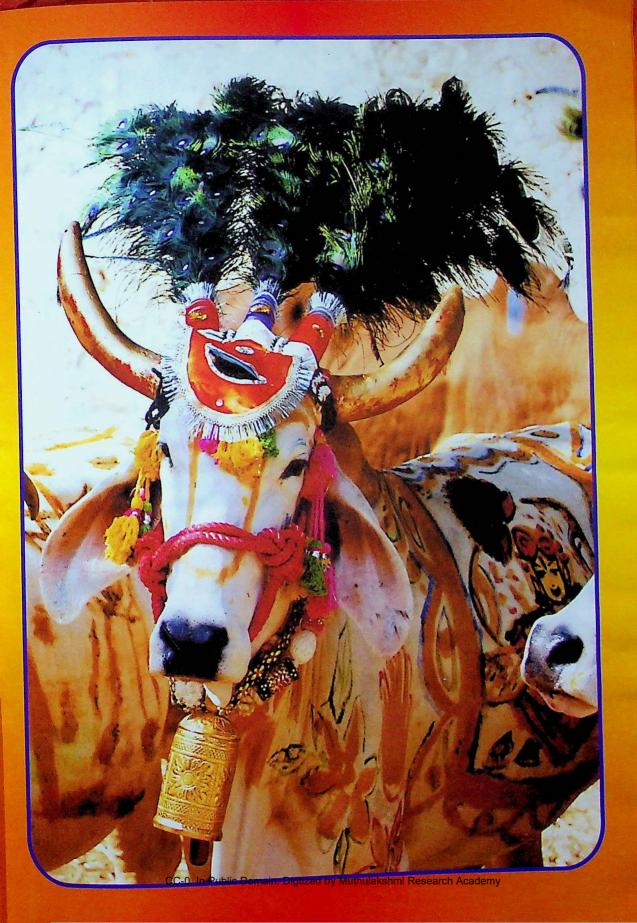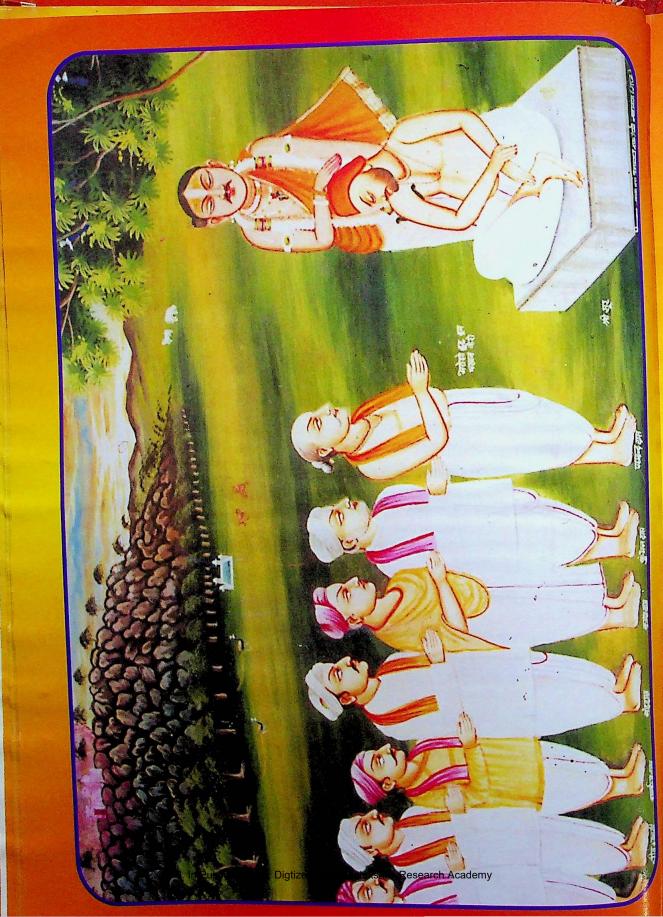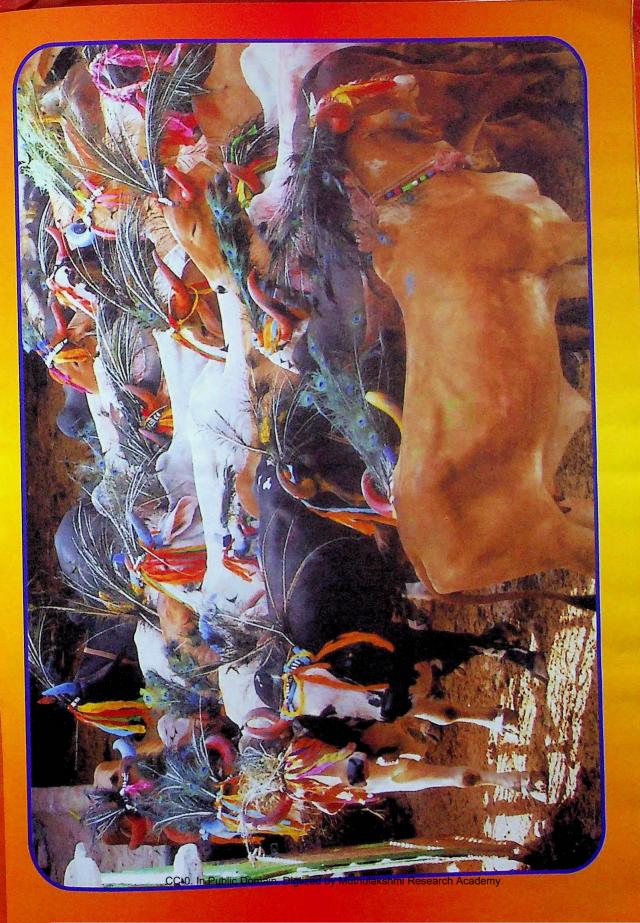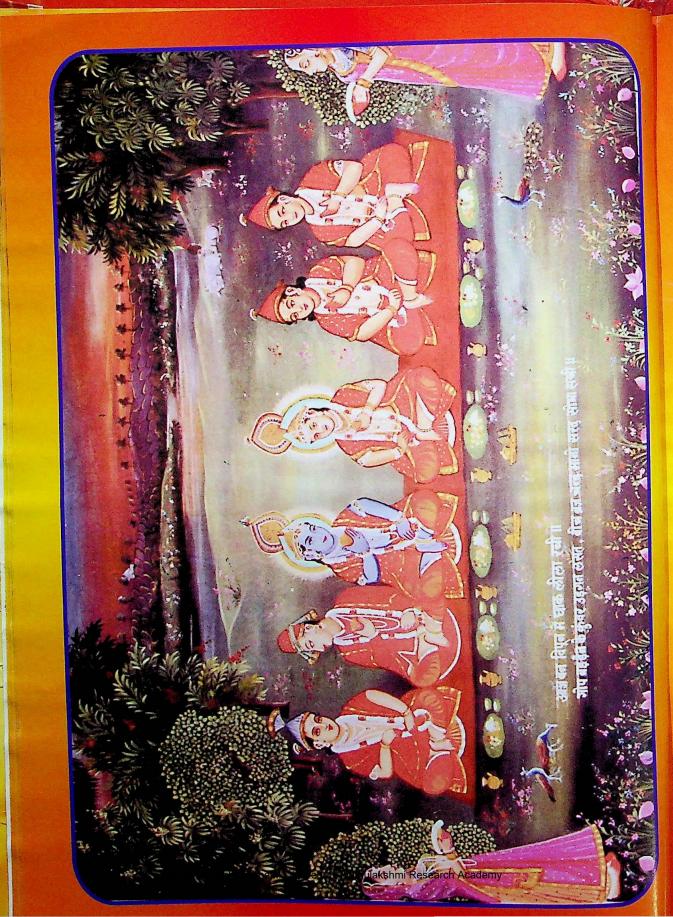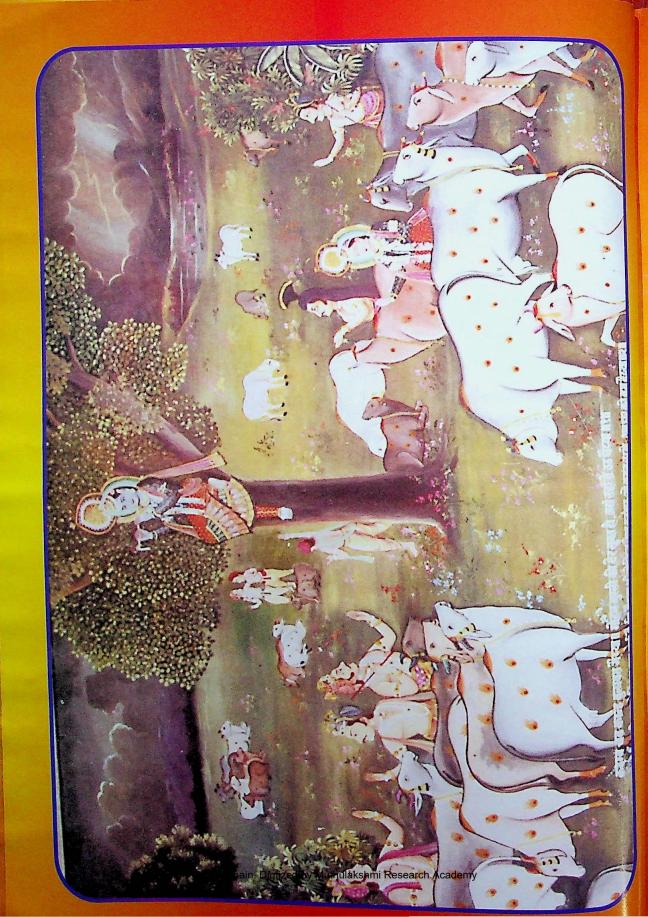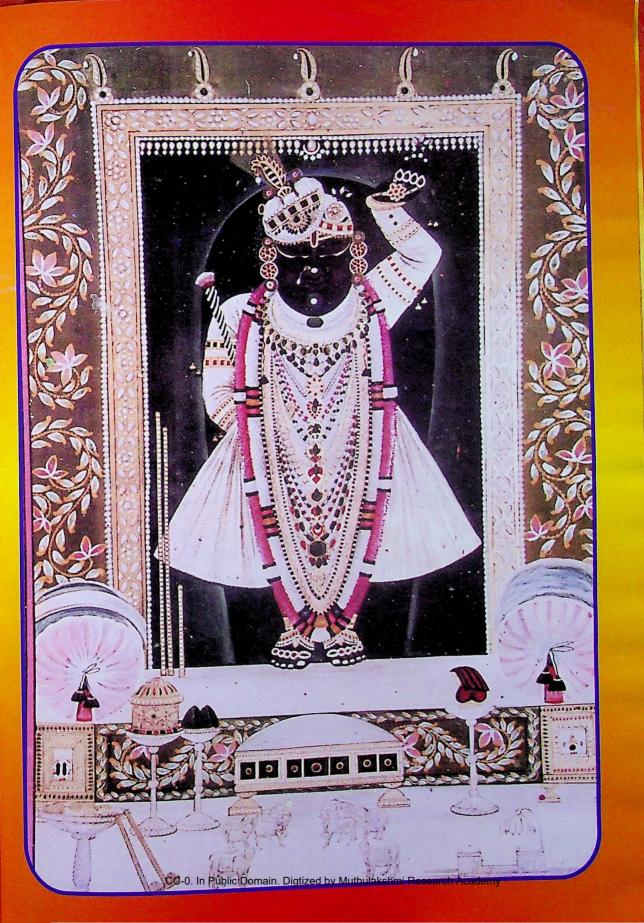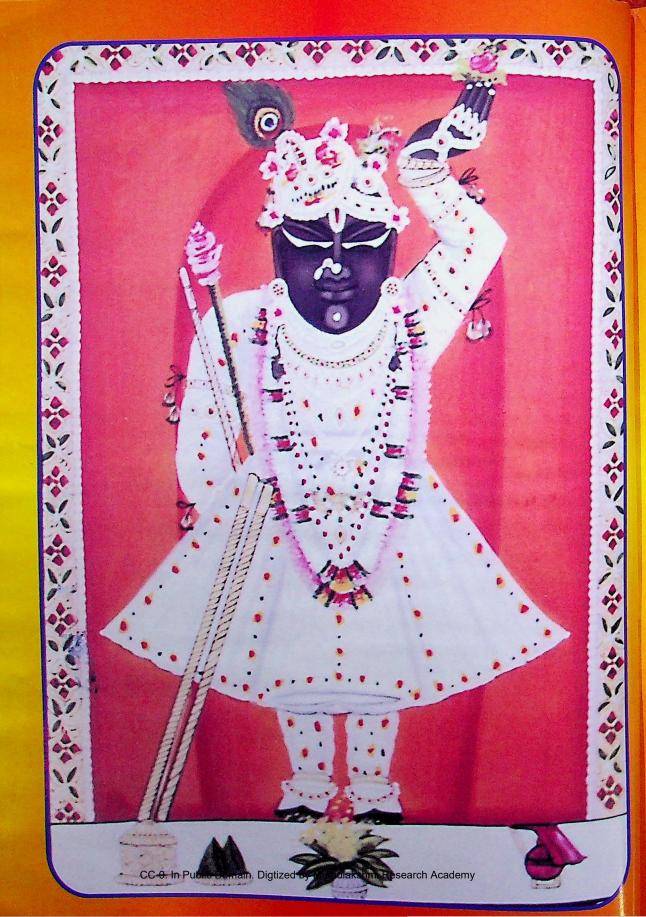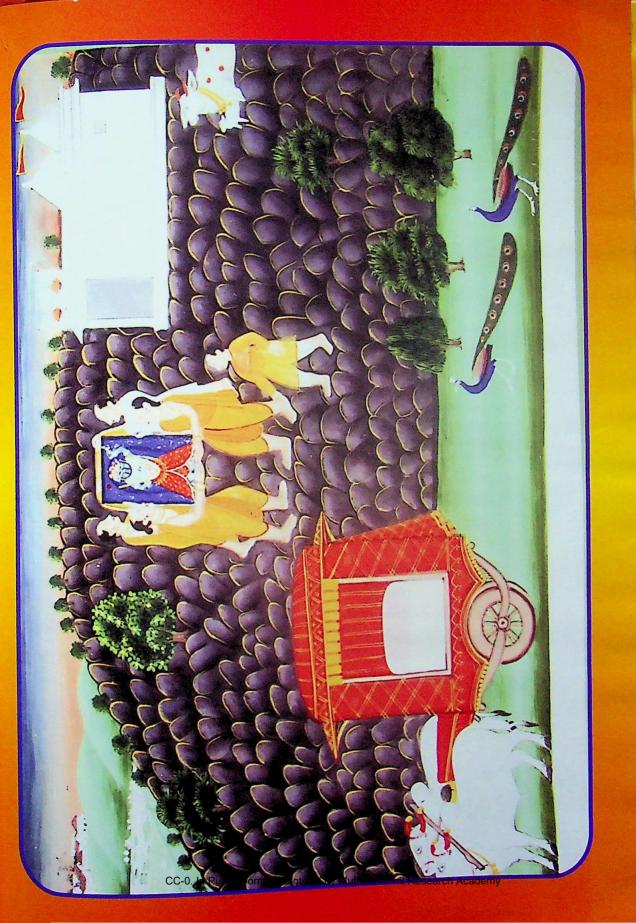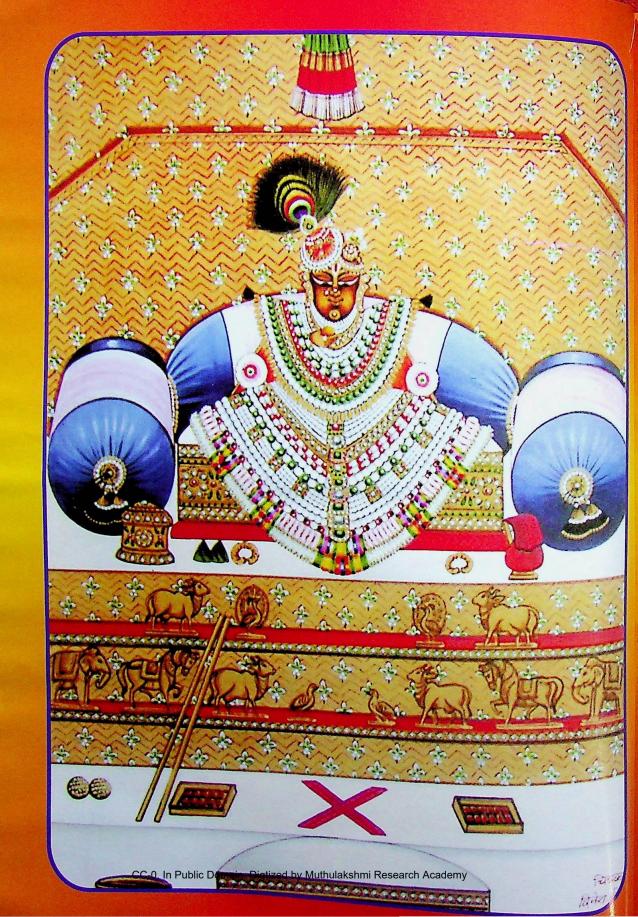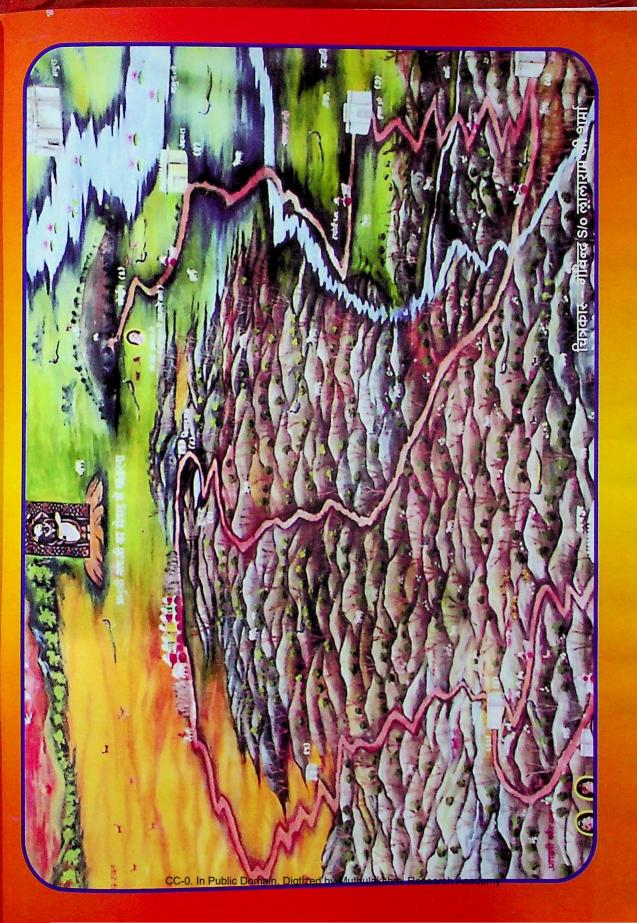
प्रभु श्रीनाथजी के शुभागमन का मार्ग

□. गोवर्धन से विक्रम सम्वत् १७२६ आश्विन पूर्णिमा (शरद पूर्णिमा) शुक्रवार को आगरा के लिये प्रस्थान।

□. आगरा में १६ दिन बिराजे तथा यहीं पर अन्नकूट अरोगा श्रीनवनीतप्रियजी भी यहां पर अन्नकूट में पधार गये।

□. कृष्णपुरी दण्डोती धार चम्बल नदी के तट पर फाल्गुन से वैशाख मास तक रहे।

□. पद्मशिला कोटा में श्रावण से कार्तिक मास तक बिराजे।

□.□. पुष्कर से किशनगढ़ पधारे वहां से दो मील दूर एक पहाड़ी पर "पीताम्बरजी की गाल" नामक स्थान पर तीन माह गुप्त रूप से रहे।

□. चौपासनी (कदम्बखण्डी) में चातुर्मास पूर्ण किया।

□. वि. सं. १७२८ में सिंहाड़ (नाथद्वारा) पधारे तभी से इस स्थान का नाम श्रीनाथद्वारा हुआ, फाल्गुन वदि ७ शनिवार को वर्तमान मन्दिर में प्रभु को पाट बैठाया।

□. वि. सं. १८५८ में श्रीनाथजी माघ कृष्णा १० को दस माह के लिये उदयपुर पधारे, एवं अन्नकूट तक की सेवा यहां अंगीकार की।

□□. उदयपुर से घसियार पधारकर ५ वर्ष २ माह वहां बिराजे।

□□. घसियार से वि. सं. १८६४ आश्विन सुदि ४ को पुनः नाथद्वारा पधारे तब से अब तक प्रभु इस पावन धरा को धन्य किये हुए हैं।

{ देखिये– पास में स्थित प्रभु के आगमन मार्ग के मानचित्र को }

विद्याविभाग
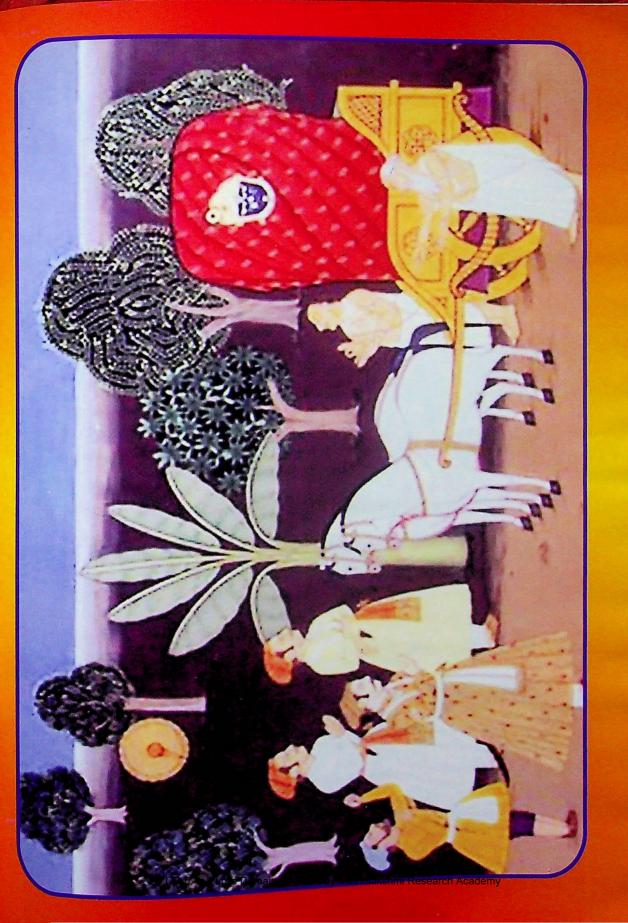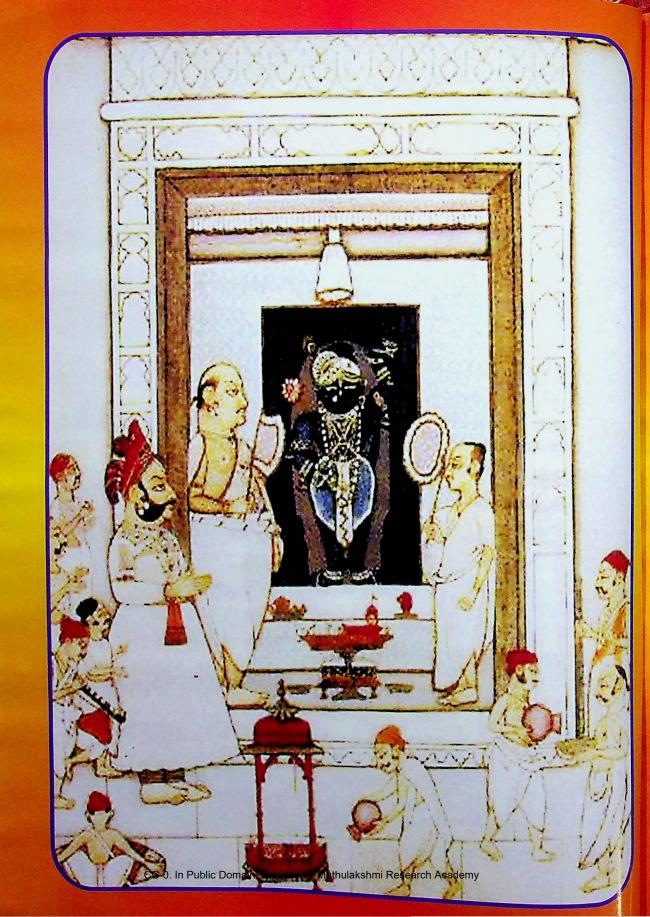
गोस्वामी तिलकायत श्री बड़े दामोदरजी

जन्म तिथि माघ कृष्ण ८ वि. सं. १७११
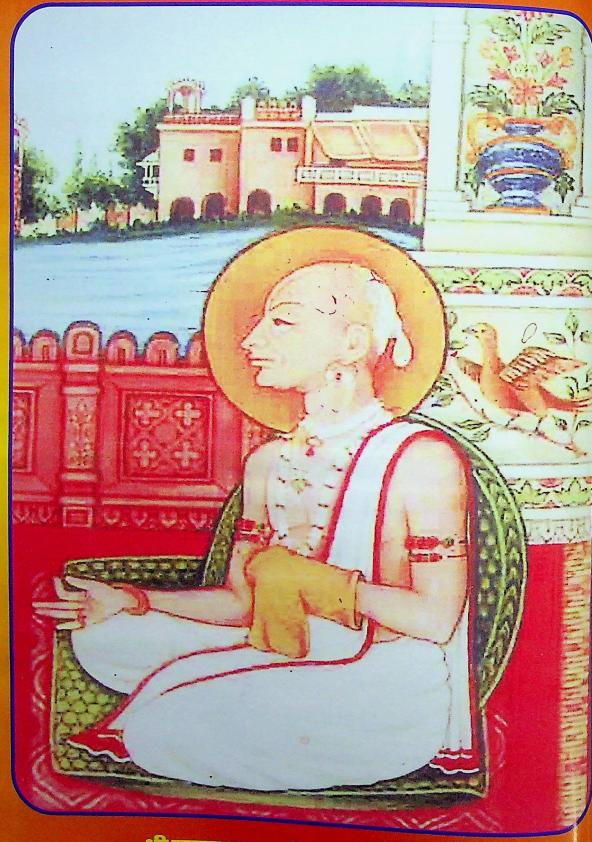
श्री [illegible] वल्लभजी प्रभु को पधराने वाले

शिक्षापत्र के रचयिता गो. श्री हरिरायजी महाप्रभुजी

आविर्भाव वि. १६४७ आश्विन कृष्ण ५ १२५ वर्ष वि.सं. १७७२

नाथद्वारा मन्दिर इनकी देखरेख में बना

चित्रकार – गेविन्द S/o लालाराम जी शर्मा
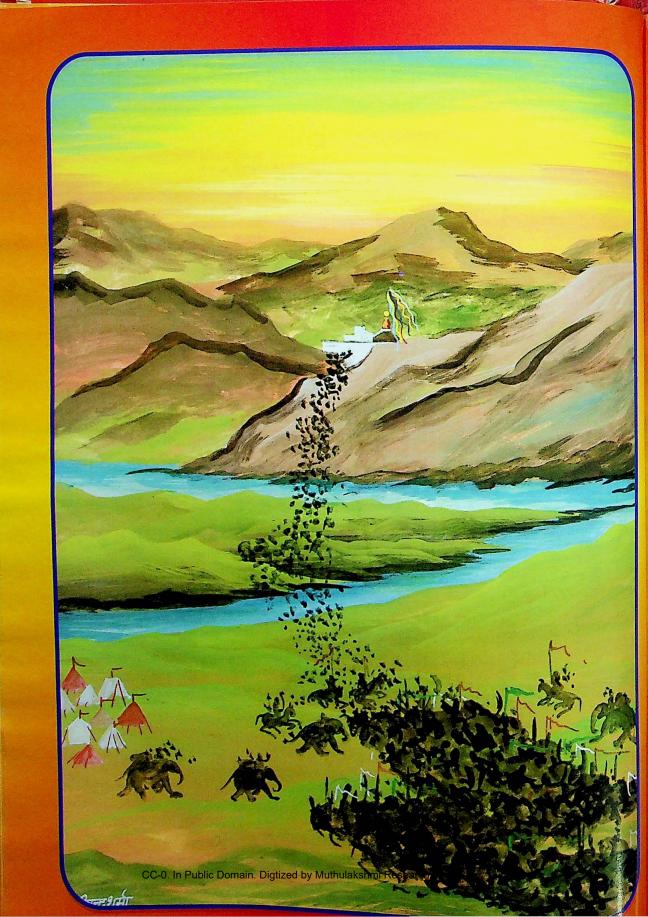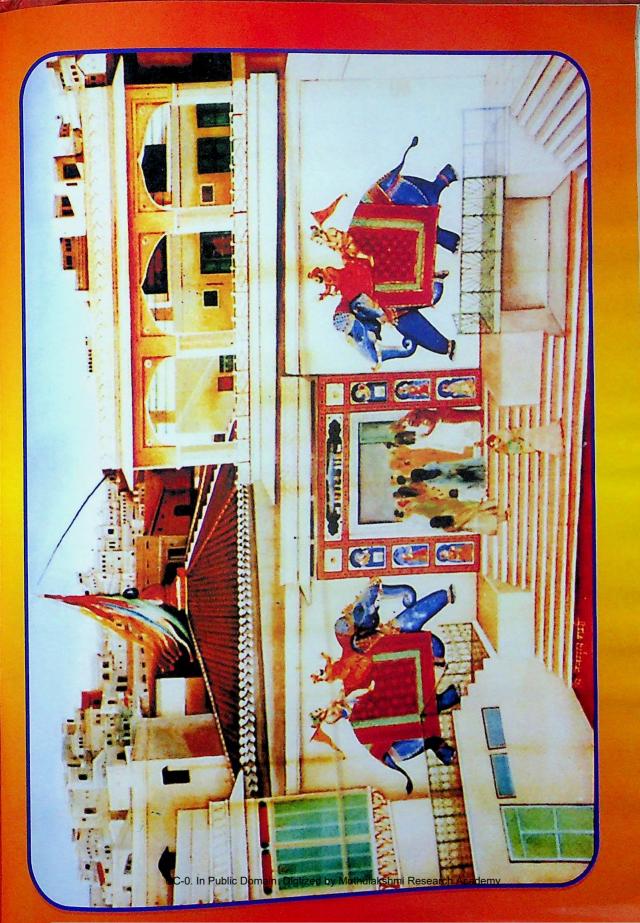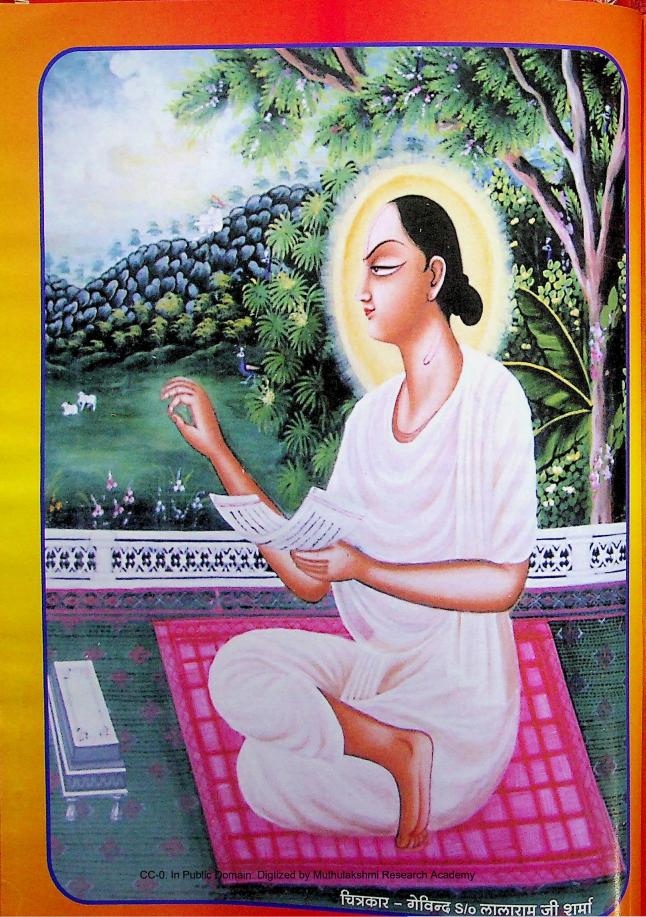
पूर्व महाराणा श्री राजसिंह जी उदयपुर जिनके समय में श्रीनाथजी मेवाड़ पधारे

पूर्व महाराणा भीमसिंह जी उदयपुर

विजयनगर के राजा श्री कृष्णदेव राजा जिनकी सभा में श्री वल्लभाचार्य जी ने शुद्धाद्वैत मत स्थापित किया

कृष्णदेव राजा सपरिवार भेट लेकर उपस्थित

॥श्रीहरिः॥

भूमिका

पुष्टि साहित्य के विकास में श्रीहरिरायजी ने बड़ा ही योगदान दिया है। उनका महत्वपूर्ण कार्य वार्ता साहित्य का संकलन था। वे श्री गोकुलनाथ जी के वचनों के प्रचारक एवं संपादक थे। श्रीवल्लभ संप्रदाय में वार्ता साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। संप्रदाय के आचार्यों में गो. श्री हरिरायजी बड़े विद्वान, समर्थ साहित्यकार एवं कवि मनीषी अपनी दिव्य प्रतिभा के कारण ही संप्रदाय में दूसरे महाप्रभु के नाम से विख्यात हुए, उन्होंने जो 'रसिक प्रीतम' के नाम से पदों की रचना की है, वे पद अष्ट सखाओं की काव्य साधना से ही ऊपर उठ गये हैं।

इस प्रकार से यूँ कहें कि श्री हरिरायजी वार्ता साहित्य के निर्माता और विचारक थे। नाथद्वारा प्रभु के पधारने के पश्चात् श्री हरिरायजी महानुभाव ने श्रीनाथजी की प्राकट्य वार्ता की रचना की। इस वार्ता में श्रीनाथजी का प्राकट्य उर्ध्वभुजा, मुखारविन्द आदि से लेकर मेवाड़ पधारने का सारा वर्णन इसमें उल्लिखित है।

वार्ता के अंत में श्रीवल्लभाचार्यजी का संक्षिप्त जीवन एवं चरित्र वर्णन है। श्री गोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य की प्रामाणिकता में गर्ग संहिता के प्रमाण उद्धृत किये हैं। इसमें श्री गोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य का प्रकार तथा प्रकट होकर जो लीला भूलोक में की है, उनका श्रीगोकुलनाथजी के वचनामृत आदि से संग्रह करके उन्होंने पृथक् से वर्णन किया है। श्रीहरिरायजी महाप्रभु ने वर्णन किया है कि आचार्य श्रीदैवीजीवों के उद्धारार्थ भगवान् की आज्ञा से इस भूमण्डल पर प्रकट हुए। उस समय आपके सर्वस्व श्रीगोवर्द्धननाथजी का भी अखिल लीला सामग्री के सहित व्रज भूमि में प्रादुर्भाव हुआ। गर्ग संहिता के गिरिराज खण्ड में दर्शन एवं नाम का कितना सुंदर वर्णन प्रभु के लिये किया है

ये करिष्यन्ति नेत्राभ्यां तस्य रूपस्य दर्शनम्।
ते कृतार्था भविष्यन्ति श्रीशैलेन्द्र कलौजनाः।।

प्रभु श्रीनाथजी की इन नामों से भी प्रसिद्धि हुई है।

श्रीनाथं देवदमनं तं वदिष्यन्ति सज्जनाः।
गिरिराज गिरौ राजन् सदा लीलां करोति यः।।

आगे वर्णन किया है कि जो श्रीनाथ देवदमन तथा श्रीगोवर्द्धन गिरि के दर्शन करता है उसको पृथ्वी के चारों ही नाथों की यात्रा का फल प्राप्त हो जाता है। पृथ्वी के चारों ही नाथों की यात्रा करके बुद्धिमान् ''देवदमन'' का दर्शन नहीं करता है तो उसकी यात्रा निष्फल होती है

चतुर्णां भुवि नाथानां कृत्वा यात्रां नरः सुधीः।
न पश्येदेव दमनं सा यात्रा निष्फला भवेत्।।

निवेदक :-

त्रिपाठी यदुनन्दन श्री नारायणजी शास्त्री

||श्रीहरिः||

श्री हरिरायजी महाप्रभु

गोस्वामि श्रीहरिरायजी महाप्रभु का प्रादुर्भाव विक्रम संवत् १६४७ भाद्रपद कृष्ण पंचमी को गोकुल में हुआ। इनके पिता का नाम श्रीकल्याणरायजी था। आप श्री विट्ठलनाथजी के द्वितीय पुत्र श्री गोविन्दरायजी के पौत्र थे। आठ वर्ष की अवस्था में श्री गिरिधरजी की आज्ञा से श्री गोकुलनाथजी ने आपका यज्ञोपवीत संस्कार कराया।

श्रीगोकुलनाथजी अपने समय के उद्भट विद्वान्, प्रकाण्ड पण्डित, अपूर्व योग्यता सम्पन्न अनन्य भक्ति भावना से युक्त थे। आप द्वारा श्री हरिरायजी का वेदाध्ययनादि कार्य सम्पन्न हुआ। श्री हरिरायजी का श्रीनाथजी के प्रति दृढ़ अनुराग था। आपके लिए श्रीठाकुरजी का वियोग एक क्षण भी असह्य था। आपके जीवन पर पूर्ववर्ति आचार्यों का पूर्ण प्रभाव पड़ा। उसमें भी श्री गोकुलनाथजी का विशेष प्रभाव रहा। संप्रदाय में आप श्रीकी चौथे आचार्य के रूप में ख्याति है।

मुगल अत्याचारों को देखकर आप मेवाड़ पधार गये। तत्कालीन महाराणा मेवाड़ के शिरोमणि श्रीराजसिंहजी ने आपका भव्य स्वागत किया तथा आपश्री की इच्छानुसार आपके इस अरण्य में बिराजने के लिए स्थान बनवा दिया। यशस्वी, लब्ध प्रतिष्ठित, ख्याति प्राप्त श्री हरिराय महाप्रभु के सत्संगार्थ महाराणा श्री राजसिंह जी दर्शनार्थ पधारते रहते थे। इन्हीं दिनों व्रज से प्रभु श्रीनाथजी का मेवाड़ में पधारना हुआ।

मेवाड़ में श्री हरिरायजी महाप्रभुजी के मार्गदर्शन से श्रीनाथजी के मंदिर का निर्माण कार्य हुआ तथा प्रभु श्रीनाथजी को फाल्गुन कृष्ण ७ संवत् १७२८ पाटोत्सव कर मंदिर में पधराया।

प्रभु श्रीनाथजी के यहाँ बिराजने के पश्चात् आपने अपना आवास स्थल खमनोर बना लिया। खमनोर में विराज कर ही आपने विपुल साहित्य का सृजन किया। आप श्रीमद्भागवत के मृदु व्याख्याकार भी थे। आपके जीवन की अनेकों घटनाएँ चमत्कार पूर्ण रही जो आज भी जन-जन में प्रसिद्ध है। आपने भूतल को १२५ वर्ष तक अलंकृत किया। १७७२ में आपश्री ने नित्य लीला में प्रवेश किया।

आप द्वारा रचित श्रीनाथजी की प्राकट्य वार्ता संप्रदाय में सुप्रसिद्ध है। विद्या विभाग के अनुरोध पर विद्याविलासि आचार्य कुल किरीट गोस्वामि तिलकायित श्री १०८ श्रीइन्द्रदमनजी (श्रीराकेशजी) महाराज श्री ने इसे पुनः प्रकाशित करवाने की कृपा की है। हमें विश्वास है कि वैष्णव जन इस अनुपम साहित्य का आनंद लेंगे।

अनुक्रमणिका

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
1.	श्री आचार्यजी श्रीमहाप्रभुजी (श्रीवल्लभाचार्यजी)	1535	वैशाख	कृ.11				1587	आषाढ़	शु.3	श्रीनाथजी का प्राकट्य होने पर मंदिर बनवाकर सेवा व्यवस्था की। 1576 वै. सुदी 3 अक्षय तृतीया नवीन मंदिर में पाट बिठाया
2.	श्री गोपीनाथजी	1567	आश्वि.	कृ.12				1599			आपश्री का प्रारंभिक अध्ययन श्रीवल्लभ के चरणारविन्द में हुआ, श्रीवल्लभाचार्य के लीला प्रवेश पश्चात् आप आचार्य पदवी पर मात्र तीन वर्ष बिराजे। श्रीनाथजी की सेवा से बंगाली सेवकों को हटाकर सांचीहर ब्राह्मणों को श्रीनाथजी की सेवा प्रदान की। श्रीगोपीनाथजी को श्रीजगदीश ने हाथ पकड़कर लीला में ले लिया तथा श्रीबलदेवजी के मुखारविन्द में लीन हो गये।
3.	श्रीगुसांईजी (श्रीविट्ठलनाथजी)	1572	पौष	कृ.9				1642	माघ	कृ.7	श्रीनाथजी की सेवा व्यवस्था बांध कई नवीन उत्सव किये। मेवाड़ महाराणा उदयसिंह के समय श्रीगुसांईजी सिंहाड (नाथद्वारा) अपने अनन्य सेवक चाचा हरिवंश के साथ पधारे।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
4.	श्री पुरुषोत्तमजी	1588	आश्वि.	कृ.9				1606			श्रीपुरुषोत्तमजी गिरिराज की कन्दरा में पधारे और श्रीजी ने अपने हाथ से पकड़कर सदेह अपनी लीला में अंगीकार कर लिया। श्रीपुरुषोत्तमजी का व्यक्तित्व अलौकिक था, अल्पावस्था में ही आप नित्यलीला में पधार गये। कतिपय प्रमाणों के अनुसार आपके पितृ चरण के लीलास्थ होने के पश्चात् आपका लीला विस्तार हुआ।
5.	श्रीगिरधरजी	1597	कार्तिक	शु.12				1677	पौष	कृ.2	श्रीनाथजी को मथुरा सतधरा में पधराये। 1623 फा.व. 7 गुरुवार।
6.	श्रीदामोदरजी	1632	श्रावण	शु.15				1694	कार्ति.	सु.10	आप वेद वेदांत के निष्णात विद्वान थे। सकल शास्त्रों का आपने गंभीर अध्ययन किया था, श्रीमद्वल्लभाचार्य के संपूर्ण संस्कृत वाङ्मय का आपने अनुशीलन किया था, वल्लभ–दर्शन के आप श्रेष्ठ प्रणेता थे।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
7.	श्रीविट्ठलेशरायजी	1657	श्रावण	शु.14				1711	पौष	कृ.9	आपका प्रारंभिक जीवन संघर्षमय रहा। प्रभु श्रीनाथजी की आप पर पूर्ण कृपा थी तथा आपके मस्तक पर श्रीहस्तरखा। मुगल सम्राट ने आपको अतीव सम्मान प्रदान किया।
8.	श्रीलालगिरधरजी	1689	वैशाख	शु.7				1723	श्रावण	शु.1	आप दैवी संपदा के गुणों से युक्त, महान् आचार्य थे, क्षमाशीलता, अंतःकरण की निर्मलता, कष्ट, सहिष्णुता, सात्विकता, समस्त प्राणियों के प्रति दयालुता आदि गुण आप में विद्यमान थे। संगीतज्ञ के साथ आप कवि भी थे, आपने अनेक पदों की रचना की।
9.	श्रीदामोदरजी (बड़े दाऊजी) प्रथम	1711	माघ	कृ.8				1760			श्रीनाथजी को मेवाड़ पधराये एवं वर्तमान मंदिर में श्रीजी को पधराया नाथद्वारा नगर की सर्वप्रथम नींव आपने ही रखी।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
10.	श्रीविट्ठलेशरायजी	1743	भाद्रपद	शु.6				1793	कार्ति.		मेवाड़ में जन्म लेने वाले प्रथम आचार्य तथा नाथद्वारा मंदिर की व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान करने वाले थे।
11.	श्रीगोवर्द्धनेशजी	1763	श्रावण	कृ.10				1819	माघ	कृ.7	सात स्वरूप का उत्सव व छप्पनभोग किया। आपने अपने जन्म दिवस पर श्रीनाथजी में हांडी उत्सव प्रारंभ किया।
12.	श्रीगोविन्दजी	1769	पौष	कृ.11				1830	ज्ये.	शु.6	श्रीगोवर्द्धनेशजी के कोई पुत्र नहीं होने से लघुभ्राता श्री गोविन्दजी तिलकायित बने।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
13.	श्रीबड़े गिरधरजी	1825	आषाढ़	कृ.30				1863	वैशाख	शु.11	माघ कृ. 10 वि.सं. 1858 में श्रीनाथजी को घसियार पधराये, घसियार से पूर्व आपने श्रीनाथजी, श्रीविट्ठलनाथजी एवं श्रीनवनीतप्रियजी को कुछ समय उदयपुर पधराये। स्नान की सुविधा के लिये गिरधर सागर की नींव डाली।
14.	श्रीदाऊजी (द्वितीय)	1853	आश्विन	शु.4				1882	फाल्गु.	कृ.30	घसियार से श्रीनाथजी को वि.सं. 1864 में नाथद्वारा पधराये आपने बारह मास तक दुहेरे मनोरथ किये, आपने गिरधर सागर बंधवाया नगर के चारों ओर एक पर कोटा खिंचवाया साथ ही बड़ाबाग, बड़ाबाजार, मथुरा दरवाजा, रामबोला, जरखण्डी और बरखण्डी बनवायी। वि.सं. 1878 में आपने लालबाग बनवाया। वि.सं. 1878 श्रावण मास में आपने श्रीनवनीतप्रियजी को तीन तिबारी बनास नदी पर व लालबाग में पधराकर भव्य मनोरथ किये।
15.	श्रीगोविन्दजी	1877	कार्तिक	शु.14				1902	फाल्गु.	कृ.12	आप द्वितीय पीठ श्रीविट्ठलनाथजी के घर से गोद आये।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
16.	श्रीगिरिधारीजी	1899	ज्येष्ठ	शु.13				1959	वैशाख	शु.14	आपने संवत् 1917 में मोतीमहल बनवाया मौवागढ़ एवं नृसिंह बंकट व्यायाम शाला का निर्माण कराया। गाँवों में गौशाला बनवाई।
17.	श्रीगोवर्द्धनलालजी	1919	भाद्रपद	कृ.1				1990	आषाढ़	शु.2	आपने कछवाई का नाला, झरनाकुण्ड तथा अन्य कुण्डों का निर्माण कराया, नाथूवास का तालाब खुदवाया सिंहाड का तालाब बड़ा करवाया गोवर्धन कुण्ड की नींव रखी। आपने ही गोवर्धन चिकित्सालय, गोवर्धन औषधालय एवं श्रीविद्या विभाग की स्थापना की और अन्य कई जनहित के कार्य किये। आपका कार्यकाल स्वर्णयुग था।
18.	श्रीदामोदरलालजी	1953	पौष	शु.6				1992	श्रावण	शु.15	आपने बनारस जलगांव जैसी विद्वत्सभाओं में सम्मान पाया आप क्रिकेट के भारत प्रसिद्ध खिलाड़ी थे।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
19.	श्रीगोविन्दलालजी	1984	मार्गशीर्ष	कृ.7				2051	माघ	कृ.4	आपने श्रीनवनीतप्रियजी को श्रीविट्ठलनाथजी में पधराया तथा छप्पनभोग किया तथा सात स्वरूप का उत्सव किया। आपने गोविन्द विद्यालय, गोविन्द पुस्तकालय, गोविन्द वाचनालय, राष्ट्रीय विद्यापीठ, सार्वजनिक उद्यान, साहित्य मण्डल, गोविन्दपुरा, वल्लभपुरा, कृष्णकुण्ड, कन्याशाला, साधु सम्मेलन के कार्य करवाये।
20.	श्रीदाऊजी (श्रीराजीवजी)	2005	पौष	कृ.1				2056	चैत्र	कृ.10	आपश्री ने लालन के सुख का विचार करते हुए अनेक मनोरथ किये, आपश्री ने लालन को लालबाग में पधराकर, श्रावण मास में हिंडोरा के मनोरथ किये, कछवई बाग में श्रीनवनीतप्रियजी, श्रीविट्ठलनाथजी, श्रीमदनमोदनलालजी एवं श्रीद्वारिकाधीशजी (कांकरोली) कुंजफाग खेल का मनोरथ किया एवं मोतीमहल में लाल छात पर लालन को पधराये।

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम की वंशावली	जन्म						लीला संवरण			विशेष
		संवत्	मास	दिवस	1	2	3	संवत्	मास	दिवस	
21.	श्रीइन्द्रदमनजी (श्रीराकेश जी)	2006	फाल्गुन	शु.7							विक्रम संवत् 2057 आषाढ़ शुक्लपक्ष 6 (कसूंभी छठ्ठ) को आपश्री का आचार्य पद पर तिलकोत्सव सम्पन्न हुआ। संवत् 2058 अधिक मास में श्रीनवनीतप्रियजी को गौशाला में पधराकर अलौकिक मनोरथ किया। ज्येष्ठ कृष्ण 10 रविवार को अमरीका में श्रीव्रजराज जी का स्वरूप उत्तरी अमरीका पेनसिलबेनिया व्रजस्थान में वि. सं. 2060, 25 मई सन् 2002 को पधराया।
22.	चि. श्रीभूपेशकुमार जी (श्रीविशालबाबा)	3037	पौष	कृ.30							पूज्यपाद आचार्यवर्य्य गोरवामि तिलकायित श्री 108 श्री राकेशजी महाराज श्री के आप सुयोग्य पुत्र रत्न है। तेज संपन्न, कुशाग्रबुद्धि, विलक्षण प्रतिभा, मृदुभाषी तथा उदीयमान भास्कर के रूप में आपश्री को देखा जा रहा है।

महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी की चौरासी बैठकें

गोकुल की पहली बैठक – गोविंद घाट, गोकुल, उ.प्र.
गोकुल की दूसरी बैठक – भीतर की बड़ी बैठक
गोकुल की तीसरी बैठक – श्रीद्वारकाधीश का शैय्या मंदिर
वंशीवट – वृंदावन, जिला मथुरा
विश्रामघाट – मथुरा
मधुबन-महोली, जिला मथुरा
कुमुदवन – पोस्ट उस पार, जिला मथुरा, उ.प्र.
बहुला वन – पोस्ट वाटी गाँव, जिला मथुरा
राधा कुण्ड – पो. राधाकुण्ड, जिला मथुरा
मानसी गंगा (दो बैठकें) – वल्लभ घाट चलकेश्वर के पास, पोस्ट गोवर्धन जिला मथुरा
परासोली – (परस राम स्थली) – चन्द्र, सरोवर, पोस्ट गोवर्धन, जिला मथुरा
आन्योर – सद्दूपांडे का घर, पो. आन्योर, मथुरा
गोविंद कुण्ड – पोस्ट आन्योर जिला मथुरा
सुंदर शिला – गिरिराज जी के सामने
गिरिराज की बैठक – पो. जतीपुरा, जिला मथुरा
कामवन की बैठक – श्री कुण्ड, पो. कामा, जिला भरतपुर, राजस्थान
गहूरवन – राधारानी के मंदिर के आगे, मोरकुटी के नीचे, पोस्ट बरसाना, जिला मथुरा
संकेतबन बगीचे में, कृष्ण कुण्ड, पोस्ट बरसाना
नंदगाँव – मानसरोवर, सड़क के उस पार, नंदगाँव, जिला मथुरा
कोकिलावन – पोस्ट बठेन, जिला मथुरा
भांडीरवन – (अप्रकट)
मानसरोवर – (माखन) पो, माट, जिला मथुरा
सूकर क्षेत्र – सौरभ घाट, पोस्ट सौरों जिला अटोहा, उ.प्र.
चित्रकूट – कामलानाथ पर्वत, पोस्ट पीली कोठी, म.प्र.
अयोध्या – गुसांई घाट (अप्रकट)
नैमिषारण्य – वेद व्यास आश्रम के सामने
काशी की पहली बैठक – पुरुषोत्तमदास जी का घर, जतन बड़, चैतन्य रोड़, दूध हट्टी के पास, वाराणसी
काशी की दूसरी बैठक – पंच घाट (भावनात्मक)
हरिहर क्षेत्र – महादेवजी के मंदिर के पास, मगर हट्टा चौक, वैद्यनाथ धाम, जिला वैशाली, बिहार, हाजीपुरा
जनकपुर – (अप्रकट) माणिक तालाब
गंगासागर – कपिल कुण्ड पर – (अप्रकट)
चम्पारण्य की पहली बैठक, राजिम, जिला रायपुर, छत्तीसगढ़
चम्पारण्य की दूसरी बैठक, घट्टी की बैठक
जगन्नाथपुरी – हजारी मल दूध वाले की धर्मशाला के पास, ग्राण्ड रोड़, पुरी, उड़ीसा
पंढरपुर – चन्द्रभागा नदी के उस पार, महाराष्ट्र
नासिक – परसरामपुरिया मार्ग, पूसा पंचवटी, नासिक
पन्ना नृसिंह – मंगलगिरि स्टेशन, विजयवाड़ा (अप्रकट)
लक्ष्मण बालाजी – कनार्टक धर्मशाला (छत्रमू) के बाजू में, तिरुपति, आ.प्र.
श्री रंग – त्रिचनापल्ली (अप्रकट) कावेरी में बह गई
विष्णु कांची – कांचीपुरम (तमिलनाडु)
सेतुबंध रामेश्वर – (रामेश्वर)

४२. मलय पर्वत, उटकमंड के पास (अनिश्चित)
४३. लोहागढ़ – (हरी) फाल के सामने, पणजी, गोआ
४४. ताम्रपर्णी नदी की बैठक – तिरुनेल्वेली रेलवे स्टेशन के पास (भावनात्मक)
४५. कृष्णा नदी की बैठक – (अनिश्चित)
४६. पंपा सरोवर – (अनिश्चित) हास्पेट
४७. पद्मनाथ – पौढ़ानाथ
४८. जनार्दन – पो. बरकला (केरल राज्य)
४६. विद्यानगर – (अप्रकट)
५०. त्रिलोकभानजी की बैठक – (अप्रकट)
५१. तोताद्रि पर्वत – नांगनेरी, तिरुनेल्वेली रेलवे स्टेशन (अप्रकट)
५२. दर्भशयन – आरिसेतु, रमनाडपुरम् (तमिलनाडु)
५३. सूरत – अश्विनी कुमार घाट, सूरत, गुजरात
५४. भरूच – पावर हाउस के पास, कचहरी के पीछे, भरूच, गुजरात
५५. मोरवी – मच्छुनदी के सामने का घाट, मोरवी, सौराष्ट्र
५६. नवानगर – नागमति नदी का घाट, काला बड़ गेट रोड़, जामनगर
५७. जाम खंभालिया – स्टेशन रोड़, कुंभ के ऊपर खंभालिया, जिला जामनगर, वाया द्वारका
५८. पिंडतारक – पो. पिंडारा, भोपाल का स्टेशन, जि. जामनगर, वाया द्वारका
५६. मूल गोमती – व्यवस्था (पुरी मावती) देवी दास नाथूराम, नीलकंठ चौक, गोमती वाया द्वारका
६०. द्वारका – गोमती नदी के किनारे, द्वारका
६१. गोपी तालाब – जिला जामनगर वाया द्वारका
६२. बेट शंखोद्धार – शंख तालाब, भेंट द्वारका, जिला जामनगर
६३. नारायण सरोवर – तहसील लखपत जिला कच्छ
६४. जूनागढ़ – दामोदर कुण्ड, गिरनार रोड़, जूनागढ़
६५. प्रभास क्षेत्र – त्रिवेणी नदी का घाट, प्रभास पाटण, जिला जूनागढ़
६६. माधवपुर – कदम्ब कुण्ड के ऊपर (बेड़) जिला जूनागढ़
६७. गुप्त प्रयाग – पोस्ट देलवाड़ा, जिला जूनागढ़
६८. तगड़ी – अहमदाबाद, बोटद मार्ग पर
६६. नरोड़ा – रोड़, अहमदाबाद
७०. गोधरा – राणा व्यास मार्ग, पटेल बाजार गोधरा, जिला पंचमहाल, गुजरात
७१. खेरालु – श्री मालीवास, खेरालु जिला मेहसाणा
७२. सिद्धपुर – बिंदु सरोवर, सांदीपनी आश्रम के पास, उज्जैन
७३. उज्जैन – गोमती कुण्ड, सांदीपन आश्रम के पास, उज्जैन
७४. पुष्कर – ब्रह्माजी के मंदिर के आगे, वल्लभ घाट, पुष्कर, जिला अजमेर, राजस्थान
७५. कुरुक्षेत्र – सरस्वती कुण्ड, शक्ति देवी के मंदिर के पास, कुरुक्षेत्र
७६. हरिद्वार – हर की पैड़ी के मार्ग पर, हरिद्वार, उ.प्र.
७७. बदरिकाश्रम – मंदिर के पास, बद्रीनाथ, उ.प्र.
७८. केदारनाथ – (अप्रकट)
७६. व्यास आश्रम – अलक नंदा भागीरथी संगम के पास, केशव प्रयाग, बद्रीनाथ, उ.प्र. (अप्रकट)
८०. व्यास गंगा (अप्रकट)
८१. हिमालय पर्वत की बैठक – (अप्रकट)
८२. मद्राचल – (अप्रकट)
८३. अडैल – त्रिवेणी संगम के सामने, ग्राम देवरस, पो. नैनी जिला इलाहाबाद, उ.प्र.
८४. चरणाट – आचार्यकूप, पोस्ट चुनार जिला मिर्जापुर, उ.प्र.

।। श्रीगोवर्द्धनधरो जयति ।।

।। श्रीगोवर्द्धननाथस्योद्भववार्ता ।।

अर्थात्

१. श्रीनाथजी की प्राकट्य वार्ता

अब श्रीगोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य का प्रकार एवं प्रकट होकर जो जो चरित्र भूलोक में किये नका श्रीगोकुलनाथजी के वचनामृत आदि से संग्रह करके अलग से लिखे जाते हैं।

श्रीगोवर्द्धननाथजी श्री गिरिराज की कन्दरा में अनेक भक्तों के साथ नित्यलीला में सर्वदा राजमान है। वहाँ श्रीआचार्यजी महाप्रभु सदा सेवा करते रहते हैं श्री आचार्य जी महाप्रभु दैवीजनों उद्धारार्थ भगवान् की आज्ञा से भूमण्डल पर प्रकट हुए उस समय आपके सर्वस्व गोवर्द्धननाथजी का भी अखिल लीला सामग्री के सहित वज्र में प्रादुर्भाव हुआ। उसमें प्रमाण तथा र्शन का माहात्म्य गर्गसंहिता के गिरिराज खण्ड में इस प्रकार लिखा है।

येन रूपेण कृष्णेन, धृतो गोवर्द्धनो गिरिः।

तद्रूपं विद्यते तत्र राजन् शृंङ्गारमण्डले ।। १ ।।

अब्दाश्चतुः सहस्त्राणि तथा पंच शतानि च।

गतास्तत्र कलेरादौ क्षेत्रे शृंङ्गारमण्डले ।। २ ।।

गिरिराजगुहामध्यात्सर्वेषां पश्यतां नृप।

स्वतः सिद्धं च तद्रूपं हरेः प्रादुर्भविष्यति ।। ३ ।।

श्रीनाथं देवदमनं तं वदिष्यन्ति सज्जनाः।

गिरिराजगिरौ राजन् सदा लीलां करोति यः ।। ४ ।।

ये करिष्यन्ति नेत्राभ्यां तस्य रूपस्य दर्शनम्।

ते कृतार्था भविष्यन्ति श्रीशैलेन्द्रे कलौ जनाः ।। ५ ।।

जगन्नाथो रङ्गनाथो द्वारकानाथ एव च।

बदरीनाथश्चतुष्कोणे भारतस्यापि वर्तते ।। ६ ।।

मध्ये गोवर्द्धनस्यापि नाथोऽयं वर्तते नृप।

पवित्रे भारते वर्षे पंचनाथाः सुरेश्वराः ।। ७ ।।

सद्धर्ममण्डपस्तम्भा आर्तत्राणपरायणाः।

तेषां नु दर्शनं कृत्वा नरो नारायणो भवेत् ।। ८ ।।

चतुर्णां भुवि नाथानां कृत्वा यात्रां नरः सुधीः।

न पश्येद्देवदमनं सा यात्रा निष्फला भवेत्।। ९ ।।

श्रीनाथं देवदमनं पश्येद्गोवर्द्धने गिरौ।

चतुर्णां भुवि नाथानां यात्रायाश्च फलं लभेत् ।। १० ।। इत्यादि।

२. उर्ध्वभुजा का प्राकट्य

विक्रम संवत् 1466 श्रावण वदि तृतीया आदित्यवार (रविवार) सूर्य उदय के समय में श्रीगोवर्द्धननाथजी की ऊर्ध्वभुजा का प्राकट्य हुआ। उस समय भूमण्डल पर बड़ा मंगल हुआ।

एक आन्योर का ब्रजवासी था उसकी गाय कहीं चली गई उसको ढूंढ़ने के लिए वह गोवर्द्धन पर्वत पर गया। वह दिन संवत् 1466 की श्रावण शुक्ल 5 नागपंचमी का था उस दिन उस ब्रजवासी को उर्ध्वभुजा का दर्शन हुआ। सोलह दिन तक किसी को दर्शन नहीं हुए थे। उसने विचार किया कि ऐसा कौतुक अब तक गिरिराज में कभी देखा नहीं। ऐसा कहकर पाँच दस ब्रजवासियों को बुला लाया उनने भी ऊर्ध्वभुजा के दर्शन किये। दर्शन करके उनको भी बड़ा आश्चर्य हुआ। तब सबने मिलकर अनुमान किया कि कोई देवता श्रीगिरिराज में प्रकट हुआ है उनमें एक वृद्ध ब्रजवासी भी था उसने कहा जब सात दिन तक इन्द्र ने भयंकर वर्षा की थी उस समय श्रीकृष्ण ने सात दिन तक गिरिराज को धारणकर भूमि पर स्थापित कर दिया उस समय सब ब्रजवासियों ने मिलकर भुजा का पूजन किया था। वह यही भुजा है। स्वयं आप तो कन्दरा में खड़े है और ऊर्ध्वभुजा का दर्शन दे रहे हैं। इसलिये इनके निकालने का प्रयत्न तुम मत करो। ये अपनी ही इच्छा से जब समय आयेगा अपने आप ही प्रकट हो जायेंगे। तब तक सभी लोग इनकी ऊर्ध्वभुजा का ही दर्शन करो।

तब उन ब्रजवासियों ने दूध मंगवाया और उससे ऊर्ध्वभुजा को स्नान कराकर अक्षत, पुष्प, चंदन और तुलसी से पूजन किया एवं दही, फल, मंगवाकर भुजा को भोग अर्पित किया। नागपंचमी के दिन भुजा का दर्शन हुआ था इसलिये नागपंचमी के दिन प्रति वर्ष दस बीस हजार ब्रजवासियों

मेला लगने लगा। व्रज में किसी को किसी वस्तु की कामना होती तो ऊर्ध्वभुजा को दूध से स्नान
राने की मानता लेते उससे उनकी कामना पूरी हो जाती थी। इससे संपूर्ण ब्रज में श्रीनाथजी की
जा की महिमा व्याप्त हो गयी। किसी की गाय खो जाय, किसी के पुत्र न हो, किसी को शारीरिक
धा हो, किसी की गाय के दूध की वृद्धि न हो तो सब भुजा की मानता करते। उससे उनका कार्य
द्ध हो जाता था। इस प्रकार के तो अनेक चरित्र है उन सब को यदि लिखा जाय तो बहुत विस्तार
जायेगा। इस प्रकार विक्रम संवत् १५३५ पर्यन्त व्रज में भुजा की पूजा हुई।

३. श्रीमुखारविन्द प्राकट्य

विक्रम संवत् 1535 वैशाख वदि 11 गुरूवार के दिन, शतभिषा नक्षत्र, मध्याह्व काल, अभिजित्
मय में श्रीगोवर्द्धननाथजी के मुखारविन्द का प्राकट्य हुआ। उसी दिन श्रीमदाचार्यजी का प्राकट्य
ग्निकुण्ड से हुआ, और श्रीकृष्णावतार के ब्रजवासी भी सब व्रजमण्डल में जहाँ तहाँ मनुष्यकुल में
त्पन्न हो गये, क्योंकि श्रीगोवर्द्धननाथजी उनसे क्रीड़ा करेंगे।

४. दुग्धपान चरित्र

आन्योर में माणिकचन्द और सद्दूपांडे नाम के दो ब्रजवासी रहते थे। उनके यहाँ एक सहस्त्र
यें रहती थीं उनमें एक गाय श्रीनन्दरायजी की गायों के कुल की थी। उसका नाम धूमर था। वह
य पूरे दिन तो सब गायों में साथ रहती थी, किंतु दिन अस्त होने में चार घड़ी बाकी रहे तब वह
ब गायों के समूह से अलग होकर गिरिराजजी के ऊपर चढ़ जाती, और श्रीनाथजी के मुखारविन्द
ऊपर स्तन करके दूध का स्राव करती, उस दूध को आप श्रीगोवर्द्धननाथजी अरोगते थे। इस
कार छः महीने तक आप दूध अरोगते रहे। किंतु किसी ब्रजवासी को इसका ज्ञान न हो सका। एक
न माणिकचन्द और सद्दूपाण्डे दोनों गाय का दूध इतना कम कैसे हो गया है, इसकी परीक्षा
रने के लिये गाय के पीछे–पीछे गये और उन्होंने यह सब अलौकिक प्रकार देखा तो भाव विभोर हो
ये और श्रीगोवर्द्धननाथजी को दण्डवत् प्रणाम किया।

५. सद्दूपांडे को साक्षात् आज्ञा देना

सद्दूपांडे को साक्षात् श्री जी के दर्शन हुए। उस समय श्रीगोवर्द्धननाथजी ने साक्षात् आज्ञा
ी, "मैं यहाँ गोवर्द्धन पर्वत पर रहता हूँ। देवदमन मेरा नाम है। किन्हीं लीला के कारण मेरे नाम
न्द्रदमन, देवदमन और नागदमन ऐसे तीन नाम हो गये हैं। सात दिन तक इन्द्र की भयंकर वृष्टि
ा मैंने स्तंभन किया था तब इन्द्र का गर्व जाता रहा उसने मेरे पैरों में पड़कर अपने अपराध की क्षमा

मांगी तब मैनें उसे अभयदान दिया। इस प्रकार इन्द्र का दमन करने के कारण मेरा नाम इन्द्रदमन हो गया। इसी प्रकार कालीयनाग का दमन किया इस कारण से मेरे को नामदमन कहते हैं। संस्कृत भाषा में नाग हाथी को भी कहते हैं। मैनें कुवलयापीड हाथी का भी दमन किया था और मैं अपने भक्तों के मन मातंग का दमन करके उनके मन को अपनी मुट्ठी में रखता हूँ और उस मुट्ठी को मैंने अपनी कटि पर स्थापित की है। इससे भी नागदमन नाम है। हाथी का दमन करने के लिये अंकुश की आवश्यकता होती है इसको सूचित करने के लिये मेरे चरणारविन्द में अंकुश का चिह्न है। कृष्णावतार में अष्टलोकपाल का दमन किया था, उनमें इन्द्र, कुबेर, चन्द्रमा, वायु, वरुण, मृत्यु, यम, अग्नि, ब्रह्मा, शिव और काम ये देवता मुख्य हैं। इन सब का दमन किया इसलिये मेरा नाम देवदमन हुआ। श्रीगोवर्द्धन को धारण कर तथा पारिजात का हरण कर इन्द्र को शिक्षा दी। शंखचूड का वध करके निधि कुबेर को दी और उसे शिक्षा दी कि तू निधि की रक्षा सावधानी से करना। उषा हरण के प्रसंग में शिवजी का भी दमन किया। ब्रह्माजी का दमन वत्सहरण लीला में अपने अनेक रूपों का दर्शन देकर किया। श्रीनन्दरायजी को छुड़ाने के लिये वरुणलोक में जाकर वरुण का दमन किया। मृत्यु का दमन करके देवकीजी के मरे हुए छः पुत्रों को लाकर दिया। यम का दमन करके गुरु के मरे हुए पुत्रों को लाकर उन्हें दिये। वायु का दमन तो इन्द्र के दमन के साथ ही किया था, क्योंकि जिस समय गोवर्द्धन धारण किया उस समय अनेक प्रकार की वायु के साथ वर्षा हुई थी। उन सब का स्तंभन करके उसके मद का विनाश किया, और व्रज की रक्षा की। चन्द्रमा का दमन तो अपने मनरूप चन्द्र को प्रकट करके किया था। रासोत्सव क्रीड़ा में कामदेव का दमन किया। इस प्रकार से सब देवताओं का दमन करने से देवदमन यह नाम हुआ। यह सब बात स्वयं श्रीनाथजी ने सद्दूपांडे से कही और यह कहा कि तेरी गाय का दूध मैं नित्य पीता हूँ। आज से इसी गाय का दूध दुहकर दोनों समय लाकर मुझे पिलाना। यह सुनकर सद्दूपांडे ने साष्टांग दण्डवत् किया और निवेदन किया कि मैं आपकी आज्ञा का अवश्य पालन करूंगा।

६. सद्दूपांडे ने घर आकर सारा वृत्तांत कहा

जब सद्दूपांडे गोवर्द्धन से नीचे आन्योर में आये तब उन्होंने अपनी स्त्री भवानी और पुत्री नरो से गोवर्द्धननाथजी ने जो आज्ञा की उसे सुनाया और कहा कि, ''प्रतिदिन दोनों समय तुम गोवर्द्धननाथजी को दूध पिला आया करो।'' उस दिन से नित्य नरो और भवानी दूध लेकर श्रीगिरिराज के ऊपर जाती और श्रीनाथजी को दूध अरोगाने लगी।

७. सद्दूपांडे की गौशाला में एक गाय के आने की आज्ञा

कुछ समय के अनन्तर उस गाय ने दूध देना बंद कर दिया, तब दूसरी गाय का दूध लेकर
दूपांडे श्रीगोवर्द्धननाथजी को अरोगाने के लिये ले गया, तब श्रीनाथजी ने आज्ञा दी, "मैं तो
न्दरायजी की गायों के कुल की गाय हो उसी का दूध पीता हूँ। एक दूसरी गाय नन्दरायजी के
यों की कुल की है, वह कल तेरी गौशाला में आ जायेगी, उसका दूध लाकर मुझे तब तक पिलाना
तक तेरी वह गाय दूध देने योग्य न हो जाय।

. सद्दूपांडे की गौशाला में गाय भेजने की धर्मदास को साक्षात् आज्ञा

जमनावतो गाँव में धर्मदास नाम का एक व्रजवासी रहता था। वह भगवान् का भक्त था। वह
नदास का काका था और चतुरानागा का शिष्य था। उसके दो सौ चार सौ गायें थी। उनमें एक
श्रीनन्दरायजी के गायों की कुल की थी, वह गाय सब गायों के झुंड से अलग होकर श्रीनाथजी
मुख में दूध का स्राव करके वहीं बैठ गयी, घर न गयी तब धर्मदास ग्वाल को चिंता हुई, वह अपने
जे कुंभनदास को साथ लेकर उस गाय को ढूंढ़ने निकला, उस समय कुंभनदास की आयु दस
की थी। श्रीगिरिराज पर ढूंढ़ते–ढूंढ़ते श्रीनाथजी के पास गाय को बैठी हुई देखी। घर ले आने के
क प्रयत्न किये परंतु गाय वहाँ से उठी नहीं, तब श्रीनाथजी ने साक्षात् आज्ञा की, "अरे धर्मदास
गाय को तू सद्दूपांडे की गौशाला में कर आना इसका दूध मैं पीऊँगा यह नन्दरायजी के कुल
गायों में से है।" और कुंभनदासजी को श्रीनाथजी ने साक्षात् आज्ञा दी कि, "अरे कुंभनदास तू
य मेरे पास खेलने आया करना" इस प्रकार के मधुर वाक्य को सुनकर धर्मदास और कुंभनदास
नों ही मूर्छित हो गये। एक मुहूर्त तक मूर्छा रही जब उनकी चेतना जगी तो श्रीनाथजी की
रिक्रमा की और साष्टांग दण्डवत् करके श्रीनाथजी की आज्ञानुसार उस गाय को सद्दूपांडे की
शाला में कर आया और अपने घर गया। कुंभनदासजी भी उसी दिन से नित्य श्रीनाथजी के पास
लने को आने लगे।

९. गौडिया माधवानन्द के प्रति साक्षात् आज्ञा

एक गौडिया माधवानन्द श्रीगिरिराजी की परिक्रमा करने के लिये आये थे, और सद्दूपांडे के
कान के बाहर एक चबूतरा था उस पर रहने लगे। व्रजवासियों के संग से उनको भी श्रीनाथजी के
र्शन हुए। श्रीनाथजी के दर्शन कर उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई। माधवानन्द अत्यन्त भावुक वैष्णव थे।
होंने विचार किया कि मैं शुष्क भिक्षा लाकर उसे अपने ही हाथ से पीसकर और रसोई सिद्धकर

श्रीनाथजी को भोग धरूँ और उस प्रसाद को मैं ग्रहण करूँ। ऐसा विचार कर सेवा करने लगा। वन से गुंजा बीन लाता और उसका हार बनाकर श्रीनाथजी को धारण कराता। इसी प्रकार वन से मोर चन्द्रिका लाकर भी धारण कराता। परंतु जब उसने रसोई सिद्ध करके भोग अर्पित किया, तब श्रीनाथजी ने आज्ञा दी। मैं तो जब श्रीआचार्यजी पधारेंगे और अपने स्वहस्त से रसोई सिद्ध करके मुझे अन्न प्राशन करावेंगे, तब भोजन करूँगा। उतने समय तक दुग्धपान करके ही रहूँगा, और तेरा भोग धरने का और श्रृंगार करने का मनोरथ है तो तू पृथ्वी परिक्रमा कर आ तब तक श्रीआचार्यजी पधार जायेंगे, और हमें पाट पर आसीन करेंगे, उस समय तुम्हें सेवा में रखेंगे। उतने समय तब हम यहाँ व्रजवासियों के साथ में खेलेंगे। यह सुनकर माधवेन्द्रपुरी समय की प्रतीक्षा में पृथ्वी की प्रदक्षिण करने को चले गये। इस तरह संवत् १५४६ तक श्रीनाथजी व्रजवासियों का दूध–दही अरोगते। किसी दिन कुंभनदासजी को साथ में लेकर माखन चुराने को व्रजवासियों के घर पहुँच जाते।

१०. एक पूंछरी के व्रजवासी की मनोती

पूंछरी में एक व्रजवासी रहता था उसने देवदमन की मनोती की कि यदि मेरे पुत्र का विवाह हो जायेगा तो मैं इन देवदमन को सवामन दूध और सवामन दही समर्पण करूंगा। उसके पुत्र का तत्काल विवाह हो गया। तब उसने सवामन दूध और दही देवदमन को समर्पित किया। इस बात को जब व्रजवासियों ने सुनो तो देवदमन की मान्यता बहुत बढ़ गयी।

११. एक भवनपुरा के ब्रजवासी की मनोती

भवनपुरा का एक ब्रजवासी था उसकी गाया घने में खो गई वहाँ एक सिंह रहता था। उसकी चिंता से उसने देवदमन की मनोती की थी कि यदि मेरी गाय को सिंह नहीं मारेगा तो इस गाय का दूध मैं देवदमन को तब तक अरोगाऊँगा जब तक यह दूध देती रहेगी। रात्रि में गाय को सिंह ने देखी भी थी, परंतु उसने उस पर कोई प्रहार नहीं किया। श्रीजी ने अपनी भुजा को लम्बी कर कान पकड़कर गाय को गौशाला पहुँचा दिया। ब्रजवासी जब सवेरे उठा तो गाय को गौशाला में देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसे यह निश्चय हो गया कि इस गाय को देवदमन ने बचाया है। वह ब्रजवासी अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार दूध–दही पहुँचाने लगा। श्रीनाथजी ने कुंभनदासजी से कहा कि अरे कुंभना मेरी भुजा में दर्द हो रहा है इसलिए तू इसे दबा दे। मैनें गाय का कान पकड़कर गौशाला में कर दी है और यह भी कहा कि श्रीगिरिराज के आसपास सब ब्रजवासी तथा गाय कृष्णावतार के समय की प्रकट हो गयी हैं। अतः उनसे मैं क्रीड़ा करूँगा। किसी का दूध अरोगते, किसी का दही अरोगते, यहाँ तक की ग्वाल बालों के घर जाकर चोरी से दूध–दही ले लेते।

१२. श्रीनाथजी की रक्षा के लिये चार व्यूहों का प्राकट्य

श्रीनाथजी की रक्षा के लिये चार व्यूहों का प्राकट्य भी श्रीगिरिराज में से आपके साथ में हुआ। संकर्षण कुण्ड में से श्रीसंकर्षणदेव का प्राकट्य हुआ। गोविन्दकुण्ड में से श्रीगोविन्ददेवजी का ट्य हुआ और दानघाटी ऊपर श्रीदानीरायजी का प्राकट्य हुआ। श्रीकुण्ड में से श्री हरिदेवजी का ट्य हुआ। ये चारों देव संकर्षण वासुदेव, प्रद्युम्न और अनिरुद्धात्मक हैं ये सदा श्रीनाथजी के संग र्थ रहते हैं। इनकी सेवा मतान्तर के वैष्णव करते हैं। मध्य में श्रीपुरुषोत्तमरूप में आप विराजमान इसी से आपकी सेवा करने के लिये श्रीआचार्यजी प्रकट हुए। श्रीपुरुषोत्तम के स्वरूप को श्री षोत्तम ही जान सकते है। श्रीमद्भगवद्गीता के दशमाध्याय में अर्जुन का वाक्य है–

"न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।।

१३. श्रीनाथजी ने श्री आचार्य को झारखण्ड में श्री गिरिराजजी पर पधारकर सेवा प्रकट करने की आज्ञा दी

संवत् १५४६ फाल्गुन सुदी ११ बृहस्पतिवार के दिन श्रीआचार्य जी को श्रीनाथजी ने झारखण्ड आज्ञा दी कि हम श्री गोवर्द्धनधर स्वरूप से श्री गिरिराज की कन्दरा में विराज रहे हैं यह तुमको देत ही है। वहाँ के ब्रजवासियों को हमारे दर्शन हुए हैं। वे हमको प्रकट करने का विचार कर रहे परन्तु हम तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं, इसलिये आप शीघ्र ही यहाँ पधारें और हमारी सेवा करें। कृष्णावतार के समय के जीव यहाँ व्रज में आये हैं। उनको शरण में लेकर सेवा बनाओ, तब हम नके संग क्रीड़ा करेंगे "हरिदासवर्य के ऊपर हमारा मिलना होगा।"

१४. श्री आचार्य का व्रज में पधारना तथा श्रीविश्रान्त घाट की यंत्र बाधा दूर करना

श्रीआचार्य जी ने पृथ्वी परिक्रमा को तत्क्षण ही झारखण्ड में पूर्ण कर व्रज में पधारे सो प्रथम मथुराजी आये, और उजागर चौबे के घर विराजे। श्रीयमुना स्नान के लिये विश्रान्त घाट पर जब ने लगे, तब उजागर चौबे तथा दूसरे लोगों ने कहा महाराज विश्रान्त घाट पर तो पाँच दिन से उपद्रव हैं, इसको सुनकर आपने पूछा क्या उपद्रव है सब ने पूरा वृत्तांत सुनाया। उनने कहा बादशाह का कामदार रुस्तमअली आया था। चौबे लागों ने उसका उपहास किया था। इससे होकर उसने दिल्ली से एक यंत्र सिद्ध करके भेजा और कहा कि इसे विश्रान्त घाट पर

लटकाकर उसकी सुरक्षा रखना। जो भी हिंदू उसके नीचे होकर जायेगा या आयेगा उसकी शिख कटकर दाढ़ी रह जायेगी। उसके भय से दो दिन से सबका स्नान बंद है। इसे सुनकर आपने कहा तीर्थ से विमुख होकर यहाँ से जाना उचित नहीं है। अतः हम तो स्नान के लिये जायेंगे। यंत्र बाधा हमको नहीं होगी। हमारे साथ जिनको चलना हो वे भी चलें इसे सुनकर विशाल जन–समुदाय साथ में हो गया। सबको साथ में लेकर आपने स्नान किया और यथाविधि श्रीयमुनाजी की पूजा की। वहाँ से जब पधारे तो यंत्र बाधा किसी को नहीं हुई। आपके पधारने के अनन्तर यंत्र बाधा पुनः पूर्ववत् होने लगी। इस प्रकार का प्रभाव देखकर उजागर चौबे आदि सबने प्रार्थना की, ''इसका कोई उपाय आप करें जिससे यंत्र यहाँ से उठ जाये। इसके कारण प्रजा बहुत दुःखी है।'' ऐसा सुनकर तो आपको दया आ गई और अपने सेवक वसुदेवदास और कृष्णदास को दिल्ली भेजा और कहा कि तुम दोनों दिल्ली के सदर द्वार पर राजमार्ग में यह पत्र लटका कर वहीं बैठ जाना तुम्हारी सूचना बादशाह के पास जब जायेगी तब इसका निर्णय होगा। तब दोनों ने दिल्ली पहुँचकर वैसा ही किया। उस पत्र के नीचे होकर जो भी यवन आने–जाने लगे उनकी दाढ़ी गिर जाती और चोटी हो जाती। यह खबर सिकन्दर लोदी को जब हुई तो उसने पूछा इसका क्या कारण है तब लोगों ने कहा कि दो हिंदू फकीर यहाँ आये हैं उनने यह उपद्रव किया है। इसे सुनकर उन दोनों को बुलाकर बादशाह ने पूछा। तब दोनों ने बादशाह से कहा हिंदू और मुसलमान दोनों ही आपकी प्रजा है। इस प्रकार का उपद्रव आपके कामदार रुस्तमअली ने मथुरा में सात दिन से कर रक्खा है इस कारण प्रजा को दुःखी देखकर हमारे गुरुजी ने हम दोनों को यहाँ इस बात की खबर देने के लिये भेजा है। यह सुनकर सिकन्दर लोदी ने रुस्तमअली को बुलाकर सारा वृत्तांत सुना तब बादशाह ने कहा यह सारा अपराध तो तुम्हारा है क्या तुम्हें यह पता नहीं है कि हिंदुओं में कोई करामाती फकीर नहीं होगा। अब आँखों से देखो और अपना यंत्र जल्दी से मंगवा लो, कभी किसी के धर्म पर दृष्टि नहीं डालना। ऐसा रुस्तमअली से कहकर उन दोनों से भी कहा जब मथुरा से यंत्र यहाँ आ जाय तब तुम भी अपना यंत्र यहाँ से हटाकर जल्दी चले जाना और अपने गुरु को हमारी बंदगी कहना। इस प्रकार विश्रान्त घाट पर से यवन का यंत्र हट गया तब श्री आचार्यजी आप वहाँ से गिरिराज पर पधारे।

१५. श्रीआचार्य महाप्रभु का श्री गिरिराज जी पर पधारना, और श्रीनाथजी कहाँ प्रकट हुए है इसका पता लगाना

श्रीआचार्य महाप्रभु सब सेवकों को साथ लेकर श्रीगोवर्द्धन की तलहटी में आन्योर में सद्दूपांडे के घर के आगे पधारकर चबूतरे पर विराजे। उस समय अनेक ब्रजवासी लोग दर्शन को

(१) यह यंत्र बाधा की बात किसी पुस्तक में नहीं है।

आये। उन्होंने दर्शन किये। तब उन्होंने विचार किया कि ये तो कोई महापुरुष हैं इस प्रकार का तेजः पुंज तो मनुष्यों में हमने कभी नहीं देखा। सद्दूपांडे ने आकर प्रार्थना की स्वामिन्! आप कुछ भोजन करेंगे? तब कृष्णदास मेघन ने कहा ये तो अपने सेवक के बिना किसी का कुछ भी ग्रहण नहीं करते। यह बात हो ही रही थी, उसी समय श्रीगोवर्द्धननाथजी ने गोवर्द्धन पर्वत के ऊपर से श्रीआचार्य को सुनाने के लिये आवाज लगाई। अरी नरो दूध ला। तब नरो बोली आज हमारे यहाँ पाहुने आये हैं, यह तो ठीक हैं परन्तु मेरे लिये तो तू दूध ला। तब नरो ने कहा– ''हे लाल! अभी लाती हूँ।'' तब एक कटोरा भर दूध लेकर गयी। तब श्रीआचार्य महाप्रभु ने दामोदरदास से कहा दमला तेने कुछ सुना। तब दामोदर ने कहा महाराज सुना तो सही पर समझा नहीं। तब आचार्यजी महाप्रभु ने कहा जिस वाणी से झारखण्ड में आज्ञा की थी वे ही ये बोल रहे हैं। श्रीनाथजी यहाँ ही प्रकट हुए हैं। सवेरे चलेंगे। उसी समय नरो श्रीनाथजी को दूध पिलाकर पुनः आयी। उसे देखकर श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने कहा इसमें कुछ दूध बचा है? तब नरो ने कहा– ''महाराज घर में दूध बहुत है जितना चाहिये उतना लीजिये'' तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने कहा– ''हमको और नहीं चाहिये'' जब सद्दूपांडे ने सेवक बनने की इच्छा प्रकट की और प्रार्थना की तब श्री महाप्रभुजी ने उन्हें नाम सुनाकर सेवक बनाया, तदनन्तर उनकी वस्तुओं को अंगीकार किया। फिर रात्रि के समय सब सेवक व्रजवासी सद्दूपांडे और माणकचन्द पांडे आदि श्रीआचार्य श्रीमहाप्रभु को दण्डवत् करके सन्मुख बैठे उस समय श्रीआचार्य महाप्रभु ने उनसे पूछा इस पर्वत में श्रीदेवदमन किस प्रकार से प्रकट हुए हैं यह हमें सुनाओ तब सद्दूपांडे ने कहा ''महाराज आप सब जानते हुए भी हमसे पूछ रहे हैं'' तब आपने आज्ञा की कि फिर भी कहो। तब सद्दूपांडे ने श्रीनाथजी के प्राकट्य प्रकार की वार्ता कही उसे सुनकर श्रीआचार्य का हृदय भर आया।

१६. श्रीआचार्यजी का श्रीगिरिराजजी पर पधारना और श्रीनाथजी से मिलकर उन्हें प्रकट करना

दूसरे दिन श्रीआचार्यजी महाप्रभु सब सेवकों को साथ लेकर अत्यन्त हर्ष के साथ श्रीगिरिराज पर पधारे, थोड़ी दूर गये, इतने में तो श्रीनाथजी भी अत्यन्त हर्षित होकर सामने आकर मिले। इस प्रकार परस्पर जो प्रसन्नता हुई उसका वर्णन श्रीगोपालदासजी ने इस प्रकार किया–

''हरख ते साह्मा आविया श्रीगोवर्द्धन उद्धरण'' इत्यादि।

(१) यहाँ और पुस्तकों में कुछ पाठ भेद है किंतु प्रसंग एक–सा है।

१७. श्रीनाथजी की आज्ञानुसार श्रीआचार्यजी ने पाट बैठाकर सेवा प्रकार बांधा तदनन्तर पृथ्वी परिक्रमा के लिये पधारे

श्रीनाथजी ने आचार्य महाप्रभु को आज्ञा दी कि मुझे पाट बैठाओ, और मेरी सेवा का प्रकार प्रकट करो। सेवा के बिना पुष्टिमार्ग में अंगीकार नहीं होता। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने एक छोटा सा मंदिर सिद्ध करवाया। उसी मंदिर में श्रीनाथजी को पाट बैठाया। अप्सराकुण्ड के पास एक गुफा थी, वहाँ एक भगवदीय रामदासजी रहते थे वे आचार्य श्रीमहाप्रभु के सेवक बन गये। आचार्य महाप्रभु ने रामदासजी को आज्ञा दी कि तुम श्रीनाथजी की सेवा करो। तब रामदासजी ने कहा कि महाराज मैं तो कुछ जानता नहीं हूँ, सेवा कैसे करूंगा। मैनें तो कभी सेवा की ही नहीं है। आचार्यजी महाप्रभु ने कहा कि तुमको श्रीनाथजी सिखावेंगे। ऐसा कहकर श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने मोर चन्द्रिका का मुकुट सिद्ध करवाकर श्रीनाथजी की सेवा और श्रृंगार करके रामदासजी को बताया और कहा कि तुम नित्य गोविन्दकुण्ड पर जाकर स्नान करना और वहाँ से जल का पात्र भर लाना और श्रीनाथजी को स्नान करा अंगवस्त्र करना, और फिर जिस प्रकार हमने श्रृंगार किया है उसी प्रकार से श्रृंगार करना। गुंजा, माला एवं चन्द्रिका नित्य धारण कराना और भगवदिच्छा से जो आय हो उससे श्रीठाकुरजी को भोग समर्पित करना, और उससे अपना निर्वाह करना। दूध, दही, मक्खन आदि का तो ये ब्रजवासी भोग धरते ही हैं। ऐसी व्यवस्था कर आचार्यजी महाप्रभु ने सद्दूपांडे आदि ब्रजवासियों को भी आज्ञा दी कि ये श्रीगोवर्द्धननाथजी मेरे सर्वस्व है। इनकी सेवा में तुम तत्पर रहना यदि कोई उपद्रव हो तो सावधान रहना। जिस प्रकार से श्रीनाथजी प्रसन्न रहें वैसा करना। ऐसा कहकर श्रीआचार्यजी महाप्रभु पृथ्वी परिक्रमा करने के लिये पधार गये। श्रीआचार्यजी ने जिस दिन अपने श्रीहस्त से पाक सिद्ध करके समर्पित किया उसी दिन आपने अन्नप्राशन किया उसके पहले तो दूध, दही ही अरोगते थे। अन्नप्राशन के अनन्तर तो ब्रजवासियों के पाक से छाक (भोजन) छीनकर अरोगने लगे।

१८. गांठ्योली की पाथो गूजरी

पाथो नाम की एक गूजरी गांठयोली की रहने वाली थी। वह अपने पुत्र के लिये भोजन ले जा रही थी। देवदमन उसमें से बलात् दो रोटी छीन कर अरोग गये।

१९. गोवर्द्धन की खेमो गूजरी

उसी तरह एक गोवर्द्धन की खेमो गूजरी थी। वह दही बेचने के लिये जा रही थी। उसे श्री देवदमन दानघाटी पर मिले, और उनने दही का दान मांगा उसने दही दिया, तब उसे आज्ञा दी कि

ही तो हम लूट के खायेंगे हमें तो तू दो रोटी और दही भात की नित्य एक छाक पहुँचा दिया कर,
ब वह दही बेचने जाती तब नित्य वह एक छाक साथ में लेकर जाती थी। उसे आप अरोगते थे।
स दिन नहीं ले जाती उस दिन उसका दही लूटकर खा जाते।

२०. अडीग का व्रजवासी गोपाल ग्वाल

एक अडीग का निवासी गोपाल ग्वाल था उसे अडीग के घने में श्रीदेवदमन के दर्शन हुए,
र उसे आज्ञा दी कि तू मुझे दूध रोटी ला दे, तब उसने गाय को वन में ही दुहकर दूध अरोगाया,
र बेझरी की रोटी जो अपने खाने के लिये लाया था, उन्हें दे दी तब आपने उन रोटियों को अरोगा
र गोपालदास ग्वाल को आज्ञा दी कि तू नित्य मेरे दर्शन करने के लिये आया कर। उसे ऐसी
रूपासक्ति हो गयी, कि श्रृंगार के दर्शन के समय नित्य जाता उस समय उसके पास शस्त्र बंधा
ता उसे उसको खोलने का भान भी नहीं रहता। इसलिये उसने एक आदमी को कह दिया था कि
दि मुझे ध्यान न रहे तो तू उस शस्त्र को खोल लिया कर। जिस समय वह दण्डवत् करता उस
मय गद्–गद् कण्ठ हो जाता और आँखों में से आँसू बहते रहते जिससे उसका झगा (पहनने का
पड़ा) भीग जाता और दो लोग पकड़कर गिरिराज से नीचे उतारते। तब उतरता था।

२१. आगरे के ब्राह्मण का लड़का

आगरे में एक ब्राह्मण का लड़का रहता था। उसको देवदमन ने स्वप्न में दर्शन देकर आज्ञा
कि मैं व्रज का ठाकुर हूँ, तू गिरिराज पर आकर मेरे दर्शन कर। तब सवेरे ही उस ब्राह्मण के
ड़के ने बहुत अड़ी (जिद्द) की कि मुझे ब्रज के ठाकुरजी के दर्शन करवाओ। तब उसके पिता ने ब्रज
जितने भी ठाकुर थे, उन सब के दर्शन करवाये। परन्तु उस लड़के के चित्त में स्वस्थता नहीं हुई।
ब श्रीनाथजी के दर्शन करवाये, तब लड़के ने कहा इसी ठाकुर जी ने मुझे दर्शन दिये थे।
नाथजी ने तब उस लड़के की बाँह पकड़ ली और उसे देह से ही गोपमण्डली में स्थापन किया।
सका पिता भी दर्शन करके बहुत प्रसन्न हुआ। वह माध्व संप्रदाय का वैष्णव था उसे ज्ञान हो गया
जहाँ की वस्तु थी, वह वहाँ गई ऐसा चित्त में समाधान करके घर चला गया। उसने किसी प्रकार
कोई आग्रह नहीं किया। पीछे वह ब्राह्मण वैष्णवों में श्रेष्ठ हो गया। उसकी छप्पय भक्तमाल में है
सका नाम प्रेमनिधि मिश्र था। इस प्रकार के अनेक चरित्र एवं कौतुक श्री ठाकुरजी ने व्रजवासियों
साथ किये।

) किन्हीं पुस्तक में इस खेमो गूजरी की बात पाथो गूजरी के साथ ही है तथा आचार्य श्री का और
मदास का संवाद भी किसी–किसी पुस्तक में संक्षेप से है।

२२. सखीतरा का मांडलिया पांडे

सखीतरा में एक मांडलिया पांडे था। उसके बेटे की बहू जिस दिन घर में आयी उसी दिन उसकी भैंस खो गयी। तब उसने कहा, मेरे बेटे की बहू का पैर अच्छा नहीं है। इसके आते ही भैंस खो गयी तो आगे न जाने क्या होगा। यह बात बहू को अच्छी न लगी तब बहू ने देवदमन की मानता की, हे देवदमन! हमारी भैंस यदि मिल जायेगी तो तुम्हें दस सेर माखन खिलाऊँगी। मानता करते ही भैंस मिल गयी। तब उसके घर के सब लोग प्रसन्न हो गये, और उस बहू को दही मथने का काम सौंप दिया। पाँच सात सेर मक्खन प्रतिदिन होता था उसमें से वह आधा सेर मक्खन नित्य रख लेती। इस तरह जब दस सेर मक्खन हो गया, तब उसे तो रख लिया, और उसी दिन का नया मक्खन लेकर देवदमन से प्रार्थना की महाराज आप अपना मक्खन यहाँ से ले जाइये मैं तो सास और घर वालों के कारण से मक्खन लेकर आ नहीं सकती हूँ। तब श्री देवदमन स्वयं पधारकर उसके घर से मक्खन लेकर श्रीगिरिराज पर पधार गये। उस मक्खन को स्वयं ने भी अरोगा और अपनी सखा मंडली को भी खिलाया एवं वनचरियों को भी दिया। कुंभनदास के मुंह पर मक्खन का लेप कर दिया और शेष को ऐसे ही गिरिराज पर डाल दिया। उस दिन जन्माष्टमी थी इसलिये आपने भावात्मक उत्सव माना तब कुंभनदास ने यह पद गाया–

राग सोरठ – "आंगन दधि को उदधि भयो हो" इत्यादि

२३. टोड के घने में चतुरानागा नाम का एक भगवद्भक्त था

एक चतुरानागा नामक भगवद्भक्त था वह टोडके घने में तपश्चर्या करता था। श्रीगिरिराज के ऊपर कभी पैर नहीं रखता था। उसको दर्शन देने के लिये श्रीनाथजी भैंसे के ऊपर चढ़कर टोड के घने में पधारे, रामदासजी और सद्दूपांडे आदि सब साथ में ही थे। तब उस महापुरुष ने दर्शन किये और बड़ा उत्सव मनाया। वन में से कींकोडे बीन लाया उसका शाक किया, और सीरा बनाया, श्रीनाथजी को भोग समर्पित किया। अरोगते समय श्रीनाथजी ने कुंभनदास को आज्ञा की कि कुछ कीर्तन गाओ। तब कुंभनदास ने यह कीर्तन गाया–

राग सारंग–

भावे तोहि टोडको घनो।

कांटा लगे गोखरू टूटे फाट्यो है जात तन्यो ॥१॥

सिंह कहाँ लोमडा को डर यह बान बन्यो।

कुंभनदास तुम गोवर्द्धनधर कोन रांड ढेडनीको जन्यो ।। २ ।।

संवत् १५५२ श्रावण सुदी १३ बुधवार के दिन उस चतुरानागा का मनोरथ सिद्ध करके ीनाथजी श्रीगिरिराज के ऊपर पधारे। इस प्रकार से सब व्रजवासियों से भगवान् ने क्रीड़ा की।

२४. पूर्णमल क्षत्रिय को मंदिर बनवाने की स्वप्न में आज्ञा

संवत् १५५६ चैत्र सुदी २ के दिन श्रीनाथजी ने पूर्णमल क्षत्रिय को स्वप्न में आज्ञा दी कि तू ज में आकर मेरा एक बड़ा मंदिर बनवा।

२५. पूर्णमल क्षत्रिय का ब्रज में आना

तब पूर्णमल अम्बालय से द्रव्य संग्रह करके चला, और ब्रज में श्रीगोवर्द्धन आया। वहाँ आकर उसने पूछा यहाँ कोई देवदमन ठाकुर हैं, वे कहाँ विराजते हैं। तब एक ब्रजवासी ने बताया। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करके वह बहुत प्रसन्न हुआ और आचार्यजी महाप्रभु के पास जाकर साष्टांङ्ग दण्डवत् कर प्रार्थना की, महाराज! श्री गोवर्द्धननाथजी को बड़ा मंदिर बनवाने की इच्छा ज्ञात होती है। मुझे स्वयं को ही स्वप्न में आज्ञा की है, इसलिये मैं द्रव्यसंग्रह करके लाया हूँ। तब श्री आचार्यजी महाप्रभु ने अपने श्रीमुख से आज्ञा की कि शीघ्र ही मंदिर बनवाओ। महाप्रभु ने श्री गिरिराजजी से पूछा तुम्हारे ऊपर जब मंदिर बनेगा तो टांकी का प्रहार होगा उसके लिये क्या आज्ञा है। तब श्री गिरिराज ने आज्ञा दी कि श्रीनाथजी मेरे हृदय में विराजेंगे मेरे को तो टांकी लगने का कोई श्रम नहीं होगा आप सुखपूर्वक मंदिर सिद्ध करवाइये।

२६. हीरामणि उस्ता का स्वप्न में मंदिर बनाने के लिये आने की आज्ञा

आगरे का रहने वाला एक हीरामणि उस्ता था। उसे श्रीजी ने स्वप्न में आज्ञा दी कि तू मेरे मंदिर का निर्माण करने के लिये आ। तब वह श्रीगोवर्द्धन आया, और आचार्य जी महाप्रभु से आज्ञा मांगी। मुझे श्रीनाथजी ने मंदिर बनाने की आज्ञा की है यदि आप आज्ञा दें तो मंदिर की नीम लगे और मंदिर सिद्ध हो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने श्रीमुख से आज्ञा की जो तुम मंदिर का चित्र कागज के ऊपर लिखकर लाओ। तब वह एक बड़े कागज पर मंदिर की अनुकृति लिखकर आया उसे श्रीआचार्यजी ने देखा, उसमें शिखर था। तब आज्ञा की कि दूसरा उतारकर लाओ उसमें भी शिखर ही था, तब आचार्यजी महाप्रभु ने आज्ञा की कि श्रीनाथजी की आज्ञा शिखर वाले मंदिर में ही विराजने की है। कुछ समय तक इस मंदिर में विराजेंगे फिर यवन का उपद्रव होगा, उसके कारण

अन्य देश में श्रीजी पधारेंगे और कुछ समय तक विराजेंगे पुनः ब्रज में जब पधारेंगे तब पूंछरी की ओ पृथ्वी पर मंदिर बनेगा। श्रीगिरिराज के तीन शिखर हैं। आदि शिखर, ब्रह्मशिखर और देवशिखर इनमें पहिले श्रीकृष्णावतार में आदिशिखर पर क्रीड़ा की थी। मध्य में अब देवशिखर पर क्रीड़ा क रहे हैं। और क्रीड़ा के अवसान समय में ब्रह्मशिखर पर क्रीड़ा करेंगे। आदिशिखर और देवशिखर तो पृथ्वी में गुप्त हैं ब्रह्मशिखर ही प्रकट रूप से दर्शन देता है। आप श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं इसलिये सदा श्री गोवर्द्धन ऊपर ही क्रीड़ा करते हैं।

२७. श्रीजी के नवीन मंदिर का आरंभ

इस प्रकार आज्ञा करके संवत् १५५६ वैशाख सुदी ३ रविवार के दिन रोहिणी नक्षत्र में नवीन मंदिर की नीम लगवाई। पूर्णमल के पास एक लाख रूपयों से अधिक कुछ हजार रूपये थे। उसमें से एक लाख रूपये तो मंदिर में लग गये कुछ रूपये जो बचे थे, उन्हें लेकर पूर्णमल दक्षिण की ओर गया। वहाँ उसने रत्न खरीदे, और उनका विक्रय किया उससे उसे एक लक्षमुद्रा प्राप्त हो गयी। उन्हीं मुद्राओं से बीस वर्ष के बाद पुनः आकर मंदिर को संपूर्ण कराया। तब तक यह मंदिर आधा ही रहा। उतने समय तक श्रीजी उसी मंदिर में विराजे रहे। श्रीजी की ब्रजवासियों के साथ क्रीड़ा करने की इच्छा थी। इसीलिये बीस वर्ष तक बनने में प्रतिबंध रहा। उतने समय तक रामदास चौहान राजपूत ने सेवा की। और संवत् १५४५ से लगाकर १५७६ तक इसी प्रकार अनेक क्रीड़ा करते रहे।

२८. श्रीजी का नवीन मंदिर में पाटोत्सव

जब बड़ा मंदिर बनकर सिद्ध हो गया, उस समय आचार्यजी महाप्रभु पृथ्वी परिक्रमा करके व्रज में पधारें और जो बड़ा मंदिर बना था उसमें आचार्यजी महाप्रभु ने संवत् १५७६ वैशाख सुदी ३ अक्षय तृतीया के दिन पाट बैठाये। पूर्णमल उस दिन श्रीनाथजी के दर्शन करके बहुत प्रसन्न हुआ, और उसने अपना परम सौभाग्य माना और कहने लगा कि श्रीगोवर्द्धननाथजी ने मेरे ऊपर अनुग्रह करके यह सुख दिखाया। आचार्यजी महाप्रभु भी पूर्णमल के ऊपर बहुत प्रसन्न हुए और श्रीमुख से आज्ञा की कि तू मांग मैं तेरे ऊपर बहुत प्रसन्न हूँ। तब पूर्णमल ने आचार्य जी महाप्रभु से विनती की कि महाराज मैं अति उत्तम सुगंधित अरगजा अपने हाथों से श्रीगोवर्द्धननाथजी के श्री अंग में समर्पित करूँ। तब श्री आचार्यजी महाप्रभु ने आज्ञा की कि तू आज अपने मन में किसी प्रकार के मनोरथ का संशय मन में मत रख। सुख से समर्पित कर और भी तेरा मनोरथ हो उसे सुखपूर्वक सिद्ध कर लें। तब पूर्णमल ने अत्यन्त प्रसन्न होकर अत्युत्तम अरगजा सहित इत्र का कटोरा भरकर फुलेल सिद्ध किया और श्रीगोवर्द्धननाथजी के श्रीअंग में लगाया। अत्यन्त स्नेह वात्सल्य के साथ लगाकर बहुत

सन्न हुआ और अपना सौभाग्य माना। उसके अनन्तर श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने वस्त्र आभूषण आदि से श्रीगोवर्द्धननाथजी का शृंगार किया। उस दिन अनिर्वचनीय सुख हुआ और बड़ा उत्सव हुआ। तब पूर्णमल ने बहुत प्रसन्न होकर श्रीआचार्यजी महाप्रभु की सेवा भलीं–भांति से की। तब श्री आचार्यजी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए और अपने अंग का प्रसादी उपरना पूर्णमल को ओढ़ाया। तब पूर्णमल ने साष्टांग दण्डवत् और आज्ञा प्राप्त कर अपने स्वदेश अम्बाला को गया।

२९. श्रीजी की सेवा का आरंभ

श्री आचार्यजी महाप्रभु ने सद्दूपांडे को बुलाकर आज्ञा की कि श्रीगोवर्द्धननाथजी का मंदिर तो विशाल सिद्ध हो गया है, ऐसे मंदिर में तो बहुत से सेवकों की आवश्यकता होगी। तुम ब्राह्मण हो और शास्त्र की मर्यादा के अनुसार ब्राह्मण ही भगवद् सेवा के अधिकारी हैं। तब सद्दूपांडे ने कहा महाराज हमारी जाति के तो आचार–विचार में कुछ समझते नहीं है। "इसलिये जो सेवा में समझते हों उनको आप रखिये।" श्रीकुण्ड के ऊपर ब्राह्मण वैष्णव श्रीकृष्ण चैतन्य के सेवक हैं उन्हें आप यदि रक्खें तो उत्तम होगा। तब श्रीआचार्यचरण ने श्रीनाथजी की सेवा में बंगाली ब्राह्मणों को रक्खे और सेवा की रीति बता दी माधवेन्द्रपुरी को मुखिया नियुक्त किया, और उनके शिष्यों को सेवक नियुक्त किया। कृष्णदासजी को अधिकारी की सेवा दी, कुंभनदास को कीर्तन करने की सेवा दी। आचार्य महाप्रभु ने नित्य का नेग बांध दिया। अर्थात् इतनी सामग्री तो श्रीजी को नित्य आरोगानी ही चाहिये। इसमें से इतना नेग तो सद्दूपांडे के यहाँ पहुँचाना और अधिक आवे तो उसका अधिक उपयोग करना महाप्रसाद में तुम अपना निर्वाह करना। श्रीनाथजी का कोई समय चूकना नहीं। भगवद् इच्छा से जो भी आय प्राप्त हो उसे भगवान् के उपयोग में लाना। परंतु श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में विलम्ब न हो, इसका पूरा ध्यान रखना इस तरह श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने श्रीमुख से आज्ञा की, और आप पृथ्वी परिक्रमा को पधारे।

३०. श्रीनाथजी के लिये श्रीआचार्यजी ने अपनी सुवर्ण की बीटी बिकवाकर गाय मंगवाई

श्रीआचार्यजी महाप्रभु जब पृथ्वी परिक्रमा करने को पधारे उसके पूर्व एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने श्रीआचार्यजी को आज्ञा की कि मुझे गाय ला दो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने सद्दूपांडे से कहा कि श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय लेने की इच्छा हुई है, हमारे पास यह सोने की बीटी है उससे जो गाय आवे वह ले आओ। तब सद्दूपांडे ने प्रार्थना की कि मेरे घर में इतना गोधन

है, वह किसके लिये है, ये जितनी भी गायें और भैंस हैं ये सब आपकी ही हैं। इसलिये आप आज्ञा करो उतनी गायें ले आऊँ। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने कहा, तुम जो दोगे उसके लिये तो हम मना नहीं करेंगे। परंतु श्रीगोवर्द्धननाथजी ने मुझे आज्ञा दी है उसके लिये इस सुवर्ण की बीटी से गाय तुम ले आओ। तब सद्दूपांडे उस सुवर्ण की बीटी को बेचकर गाय ले आया। उसको लाकर श्रीनाथजी के सामने खड़ी की तो उसे देखकर श्रीनाथजी बहुत प्रसन्न हुए। फिर जब सब ब्रजवासियों ने यह सुना कि श्रीगोवर्द्धननाथ जी को गाय बहुत प्रिय है तब किसी ने चार गाय, किसी ने दो गाय, किसी ने एक गाय श्रीनाथजी को भेंट की, इस प्रकार सहस्त्रावधि गायें भेंट में आ गयी। तब श्रीनाथजी का नाम श्रीआचार्य महाप्रभु ने गोपाल रक्खा सो भगवदीय श्रीछीतस्वामी ने इस प्रकार पद गाया–

आगे गाय पाछे गाय इत गाय उत गाय गोविन्द को गायन में बसवोई भावे।

गायन के संग धावे गायन में सुख पावे गायन की खुर रेणु तन अंग लपटाये।।१।।

गायन सो व्रज छायो वैकुण्ठ विसरायो गायन के हेत गिरि कर ते उठावे।

छीतस्वामी गिरिधारी विट्ठलेश वपुधारी ग्वालिया को भेष कर गायन में आवे।।२।।

३१. श्रीजी का गोविंद कुण्ड के ऊपर पधारना

एक दिन चतुरानागा ने गोविंद कुण्ड के ऊपर रोटी सिद्ध करके श्रीनाथजी को भोग समर्पित की। उसी समय माधवेन्द्रपुरी ने पर्वत के ऊपर राजभोग अर्पण किया। उस राजभोग को छोड़कर श्रीनाथजी श्रीगोविंदकुण्ड के ऊपर चतुरानागा के यहाँ भोग अरोगने पधारे, परंतु सामग्री थोड़ी थी, इसलिये तृप्ति नही हुई तब माधवेन्द्रपुरी को आज्ञा की कि मैं भूखा हूँ, अतः राजभोग पुनः धरो तब पुनः राजभोग धरा।

३२. श्रीनाथजी बंगालियों की सेवा से अप्रसन्न हुए और उनको निकालने के लिये आज्ञा की

माधवेन्द्रपुरी प्रतिदिन मुकुट काछनी का श्रृंगार ही करते और उत्सव के दिन पाग का श्रृंगार करते और नित्य चंदन समर्पित करते यह श्रीनाथजी को अच्छा नहीं लगता। श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने इनको रक्खा था, इसलिये १४ वर्ष तक श्रीनाथजी ने कुछ आज्ञा नहीं की बंगाली बराबर सेवा करते रहे। उन्होंने एक वृन्दा देवी का स्वरूप भी श्रीनाथजी के पास बिठा दिया यह भी श्रीजी को अच्छा न लगा तब अवधूत दास को आज्ञा दी कि कृष्णदास से कहो कि ये बंगाली मेरा द्रव्य चुराकर ले जाते हैं इसीलिये इन बंगालियों को निकालो।

३३. श्रीआचार्यजी महाप्रभु का स्वधाम पधारना

तब तक संवत् १५८७ आषाढ़ सुदी २ उपरान्त ३ तीज के दिन मध्याह्न समय में श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीकाशी में हनुमान घाट पर श्रीगंगाजी के मध्य प्रवाह में पधारे पद्मासन लगाकर स्वधाम पधारे।

३४. श्री आचार्यजी महाप्रभु के प्रथम पुत्र श्रीगोपीनाथजी का गादी पर विराजना

तदनन्तर श्रीआचार्यजी महाप्रभु के प्रथम पुत्र श्रीगोपीनाथजी गादी पर विराजे और तीन वर्ष पर्यन्त श्रीजी की सेवा की तब तक बंगाली सेवा में रहे। श्रीगोपीनाथजी ने एक लक्ष रूपये के पात्र तथा आभरण श्रीजी के बनवाये।

३५. श्रीपुरूषोत्तम जी स्वधाम पधारे

श्रीगोपीनाथजी के पुत्र श्रीपुरुषोत्तमजी श्रीगिरिराज की कन्दरा में पधारे। श्रीजी ने अपने हाथ से पकड़कर उन्हें सदेह लीला में अंगीकार किया।

३६. श्री गोपीनाथजी स्वधाम पधारे

पुत्र वियोग के कारण श्रीगोपीनाथजी का चित्त बहुत अप्रसन्न रहने लगा। तब आप श्रीजगन्नाथजी (श्री जगदीशजी) पधारे और वहाँ श्रीबलदेवजी के स्वरूप में समा गये (लीन हो गये) और पूर्ण स्वरूप को प्राप्त हुए।

३७. श्रीगुसांईजी का गद्दी पर विराजना और बंगालियों को निकालकर दूसरों को सेवा में रखना

श्रीआचार्यजी महाप्रभु के दो पुत्र थे। प्रथम श्रीगोपीनाथजी वे तो श्री जगन्नाथजी में समर्पित हो चुके। द्वितीय पुत्र श्रीगुसांईजी अर्थात् श्रीविट्ठलनाथजी का जब राज हुआ तब उन्होंने बंगालियों को निकालकर श्रीजी की इच्छा जानकर गुर्जर ब्राह्मणों को सेवा में रक्खा और रामदास को मुखिया बनाया गया तथा सब ब्राह्मणों को सेवा में रक्खा।

३८. श्रीजी की आज्ञानुसार माधवेन्द्रपुरी मलयागिरि चंदन लाने के लिये दक्षिण चले

माधवेन्द्रपुरी को श्रीनाथजी ने आज्ञा दी कि असली मलयगिरि चंदन लाकर मुझे समर्पित करो मुझे चंदन लगाने की बहुत इच्छा है। इस आज्ञा को सुनकर माधवेन्द्रपुरी दक्षिण की ओर चंदन लेने गये।

३९. मार्ग में माधवेन्द्रपुरी को श्रीगोपीनाथजी के दर्शन हुए

मार्ग में माधवेन्द्रपुरी को श्रीगोपीनाथजी के दर्शन हुए, दर्शन करके एक धर्मशाला में जाकर सो गये और चित्त में विचार किया कि श्रीगोपीनाथजी के खीर के अटका का बहुत भोग आता है मैनें श्रीजी को कभी ऐसा भोग नहीं रक्खा। इस प्रकार चित्त में पश्चाताप कर रहे थे। उस समय श्रीगोपीनाथजी के शयन भोग आया था। खीर के अटका बहुत हए उसमें एक अटका खीर का श्रीगोपीनाथजी ने चुराकर अपने सिंहासन के नीचे रख लिया। जब भोग सराये तब एक अटका घट गया पंडे आपस में लड़ने लगे तब श्रीगोपीनाथजी ने आज्ञा की कि यह अटका तो मैनें चुराया है और वह सिंहासन के नीचे रक्खा है। उसे लेकर एक पण्डा और श्रीनाथजी का मुखिया माधवेन्द्रपुरी यहाँ आया हुआ है, उसे दे आवें। तब अटका लेकर एक पण्डा गया और गाँव में पुकारने लगा। कोई श्रीनाथजी का मुखिया माधवेन्द्रपुरी यहाँ आया है। यह सुनकर माधवेन्द्रपुरी तो मैं हूँ तब पंडा ने खीर का अटका उन्हें दे दिया और कहा कि श्रीगोपीनाथजी ने तुम्हारे लिये प्रसाद भेजा है। उसे लेकर माधवेन्द्रपुरी बहुत प्रसन्न हुए। उसी दिन से श्रीगोपीनाथजी का नाम खीर चोरा गोपीनाथजी हो गया और इसी नाम से उनकी प्रसिद्धि हैं।

४०. माधवेन्द्रपुरी और तैलंग देश का राजा ये दोनों ही चंदन का भार लेकर श्रीनाथजी को समर्पित करने के लिये चले

माधवेन्द्रपुरी वहाँ से दक्षिण में गये। तैलंग देश का राजा उनका शिष्य था, उसके यहाँ गये। राजा ने बहुत आदर सत्कार किया और प्रार्थना की कि महाराज आप किस दिशा की ओर जा रहे हैं। तब माधवेन्द्रपुरी ने कहा कि मुझे श्रीनाथजी ने आज्ञा की है कि मुझे गर्मी बहुत लगती है इसलिये मुझे असली मलयागिरि चंदन लाकर समर्पित करो। इसलिये मैं मलयाचल जाऊँगा और वहाँ से मलयागिरि चंदन लाकर श्रीनाथजी को समर्पित करूंगा। तब राजा ने प्रार्थना की महाराज मेरे घर में मलयाचल चंदन के मूठा हैं वे ऐसे हैं कि सवामण तेल को आटा कर उसमें एक तोला चंदन डाल

या जाय तो सारा ही तेल एकदम शीतल हो जाता है। इसे आप ले पधारिये और श्रीनाथजी को मर्पित करिये। मुझे भी श्रीनाथजी के दर्शन करावें तो मैं भी आपके साथ चलूं। तब माधवेन्द्रपुरी ने हा कि अपने पुत्र को राज्य देकर तू अकेला यदि चलता है तो मैं तुझे ले चलता हूँ और तुझे ीनाथजी के दर्शन करा दूंगा। तब राजा ने ऐसा ही किया। एक चंदन का भार तो माधवेन्द्रपुरी ने लेया और एक भार राजा ने अपने मस्तक पर लिया दोनों ही गुरू–शिष्य श्रीनाथजी के दर्शन के लये चले।

४१. माधवेन्द्रपुरी को श्रीनाथजी के साक्षात् दर्शन हुए और आज्ञा दी कि तुम श्री हिमगोपालजी की सदा सेवा करने के लिये परलोक को सिधारो

वहाँ से तिरूपति में आये वहाँ पुष्करिणी नदी में स्नान करके एक उपवन में बैठे थे और ीनाथजी का ध्यान कर रहे थे। श्रीनाथजी ने विचार किया कि मेरे लिये माधवेन्द्रपुरी मलयागिरी दन लेकर आ रहा है इसलिये उनका उसी स्थल पर उपवन में श्रीनाथजी ने दर्शन दिये। ग्रीष्म ऋतु का श्रृंगार था और माधवेन्द्रपुरी से कहा तू मेरे चंदन लगा मुझे गर्मी बहुत लग रही है। तब धवेन्द्रपुरी ने चंदन घिसकर श्रीनाथजी को समर्पित किया और हरे नारियल की गिरि तथा केले ा भोग समर्पित किया। श्रीनाथजी ने उसे अरोगा फिर श्रीनाथजी ने माधवेन्द्रपुरी को आज्ञा दी कि ज में तो हिमालय निकट है अतः बारह ही मास चंदन रूचिकर नहीं होता है केवल ग्रीष्म ऋतु में ही खद होता है। तुम्हारी इच्छा तो बारह ही मास चंदन लगाने की है इसलिये दक्षिण में सदा ही गर्मी हती है वहाँ मलय पर्वत पर मेरी एक बैठक है वहाँ तुम सदा रहो और नित्य मुझे चंदन समर्पित या करो। तुम्हारे शिष्य राजा को भी साथ में ले जाओ वह सेवा में तुम्हारी सहायता करेगा। वहाँ रा एक स्वरूप विराजमान है, उसे सब लोग हिमगोपाल कहते है। वे सदा चंदन का बागा पहरे हते हैं। उनके आसपास चंदन का वन है। वहाँ इन्द्र नित्य दर्शन करने आता है। वहाँ तुम जाओ ज में तो श्रीगुसांईजी मेरी सेवा सदा करते हैं। वे ऋतु–ऋतु के वस्त्र, आभूषण सामग्री और अनेक कार की सुगंधि आदि समर्पित करके मेरा लाड लडाते हैं। इतनी आज्ञा करके श्रीनाथजी अंतर्ध्यान ो गये। श्रीगिरिराज के ऊपर पधार गये और माधवेन्द्रपुरी को भी जिस प्रकार आज्ञा हुई थी वैसा ही किया। अर्थात् श्रीहिमगोपाल की सर्वदा सेवा करने के लिये परलोक को सिधारे।

४२. माधवेन्द्रपुरी के परलोक गमन की बात को छः महीने बाद सुनी तो श्रीगुसांईजी को बड़ा संताप हुआ

माधवेन्द्रपुरी के परलोक गमन की बात का पता श्रीगुसांईजी को छः महीने के अनन्तर लगा। ाब उनके चित्त में बहुत खेद हुआ। आज्ञा की कि माधवेन्द्रपुरी चंदन लेकर आ रहे थे उनका मार्ग में

ही परलोक गमन हो गया। इस प्रकार के प्रेम लक्षणा भक्ति वाले भक्त कहाँ मिलेंगे। इन माधवेन्द्रपुरी ने संपूर्ण शास्त्रों का अभ्यास करके उनका सारभूत जो सेवामार्ग है उसको ग्रहण किया और श्रीनाथजी की कृपा उनके ऊपर बहुत थी इस प्रकार कहकर श्रीगुसांईजी ने हृदय में बहुत संताप किया तब श्रीनाथजी ने समाधान किया और सारा वृत्तांत श्रीगुसांईजी को बताया तब श्रीगुसांईजी का समाधान हुआ।

४३. माधवेन्द्रपुरी का जीवन चरित्र

माधवेन्द्रपुरी तैलंग देश के ब्राह्मण थे। माध्व संप्रदाय के आचार्य कृष्ण चैतन्य उनके शिष्य थे उनसे माधवेन्द्रपुरी ने कहा कि तुम गौड का उद्धार करो इसलिये गौडिया सब उनके शिष्य हुए। माधवेन्द्रपुरी ने तो पहले ही संन्यास ग्रहण कर लिया था और काशी में रहते थे। श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने श्रीआचार्यजी महाप्रभु का यज्ञोपवीत काशी में किया था। माधवेन्द्रपुरी से श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने प्रार्थना की कि आप इस बालका विद्याध्यन कराइये। तब चारों वेद षट्शास्त्र सब चार महीने में ही पढ़ लिये। माधवेन्द्रपुरी से गुरू दक्षिणा के विषय में जब कहा तो उस समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु का स्वरूप उन्हें परब्रह्म के रूप में दिखाई दिया। तब उनने कहा कि मुझे दिव्य दृष्टि से ऐसा दिखाई देता है कि आप श्रीनाथजी को प्रकट करेंगे उस समय मुझे भी आप सेवा का कुछ लेश (अंश) दें ये ही गुरु दक्षिणा में मांगता हूँ। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने आज्ञा की कि जब मैं जाऊँगा और श्रीनाथजी को पाट बैठाऊँगा उस समय आप भी ब्रज में आ जावें मैं आपको श्रीनाथजी की सेवा सौंप दूंगा। जब तक श्रीनाथजी की इच्छा होगी तब तक आप सेवा करोगे। समय पाकर जब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ब्रज में पधारे। श्रीनाथजी को पाट बैठाये उस समय माधवेन्द्रपुरी भी ब्रज में आये जब उनको श्रीनाथजी की सेवा सौंपी महाप्रभु के वरदान के कारण श्रीनाथजी ने १४ वर्ष पर्यन्त माधवेन्द्रपुरी से सेवा ली तथा उनके संबंध से अन्य बंगालियों से भी सेवा करवायी। परन्तु उनमें महारास सेवा अधिकार नहीं देखा तब श्रीजी ने आज्ञा की कि तुम तो मेरा नामस्मरण करो उसी से तुम्हारा उद्धार होगा सेवा तो श्रीगुसांईजी करेंगे।

४४. अष्टसखाओं का वर्णन

जब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिराज के ऊपर विराजे और श्रीगुसांईजी सेवा करते थे उन्हीं दिनों में अर्थात् श्रीगोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य के साथ ही अष्ट सखाओं का भी प्राकट्य भूतल पर हुआ। अष्टछाप रूप होकर सब लीलाओं का गान उन्होंने किया उनके नाम ये हैं– कृष्ण १, तोक २, ऋषभ ३, सुबल ४, अर्जुन ५, विशाल ६, भोज ७ श्रीदामा ८ ये अष्टसखा अष्टछाप रूप हुए। इनके नाम की छप्पय श्रीद्वारकानाथजी महाराज ने इस प्रकार की है-

"छप्पय"

सूरदास सो तो कृष्ण तोक परमानन्द जानो।

कृष्णदास सो ऋषभ छीतस्वामी सुबल बखानो।।

अर्जुन कुंभनदास चतुर्भुजदास विशाला।

विष्णुदास सो भोजस्वामी गोविंद श्रीदामाला।।

अष्टछाप आठों सखा श्रीद्वारकेश परमान।

जिनके कृत गुन गान करि निजजन होत सुजान।।

श्रीगुसांई के प्राकट्य के समय भी श्रीनाथजी ने अनेक प्रकार के चरित्र व्रज में किये। एक ाशी का नागर ब्राह्मण जो स्मार्त था, उसका विवाह बडनगर में हुआ था। वह अपनी पत्नी को कर काशी जा रहा था। वह स्त्री श्रीगुसांईजी की सेवक थी रास्ते में जब मथुरा आई तब उस स्त्री कहा यहाँ गोवर्द्धन पर्वत के ऊपर श्रीनाथजी विराजते हैं वे हमारे कुल के देवता हैं इससे उनके र्शन करते हुए चलें। यद्यपि वह सेवक नहीं था तथापि पत्नी के कहने से उसके भी मन में दर्शन रने की इच्छा हुई दोनों ने भोग के दर्शन किये, उस समय उस स्त्री ने श्रीनाथजी से प्रार्थना की कि हाराज मेरा हाथ श्रीगुसांईजी ने आपकी स्वीकृति से ग्रहण किया है। अतः मैं आपकी सेवक हूँ, मेरा ःसंग छुड़ाइये और मुझे अपने निकट रखिये। इस विनय को सुनकर श्रीनाथजी ने अपने श्रीहस्त से सका सदेह अपनी लीला में अंगीकार किया। जब वह ब्राह्मण मरने लगा तब श्रीगुसांईजी ने उसे त्यलीला के दर्शन करवाये। उसने अपनी पत्नी को गोपिका मण्डल में देखा तब उसका संदेह वृत्त हुआ। वह ब्राह्मण भी श्रीगुसांईजी का सेवक हो गया और नित्य लीला में प्रविष्ट हो गया। सका पुनर्जन्म गाँठ्योंली में हुआ और श्याम पखावजी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसकी एक लड़की ा नाम ललिता था। वह बीन अच्छी बजाती थी और श्याम मृदंग सुंदर बजाता। इसे सुनने के लिये ीनाथजी एक दिन रात्रि में चार प्रहर जगे और प्रातःकाल शंखनाद हुए तब निज मंदिर में पधारे। जगाते समय श्रीगुसांईजी ने आपके नेत्र लाल देखे तो श्रीजी से पूछा बाबा आज रात्रि जागरण कहाँ हुआ। तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि गांठ्योंली में ललिता ने बीन अच्छी बजाई और श्याम ने मृदंग जायी तब बहुत रंग हुआ। यह सुनकर श्रीगुसांईजी ने श्याम पखावजी और ललिता को बुलाकर उन्हें नाम सुनाया और श्रीजी की सेवा में तत्पर किया। जहाँ–जहाँ श्रीनाथजी क्रीड़ा करे वहाँ–वहाँ अष्टछाप गावे और ललिता बीन बजावे तथा श्याम मृदंग बजावे।

४५. सब व्रजवासियों ने मिल श्रीजी को गायें भेंट की

सब व्रजवासियों ने यह सुना कि श्रीदेवदमन को गायें बहुत प्रिय हैं तब सबने मिलकर विचार किया कि जिसके गायें हो वह एक–एक तथा दो–दो गाय भेंट करें और गिरिराज के पास जो चौबीस गाँव थे उनके पास सब ब्रजवासियों ने मिलकर एक–एक दो–दो गाय भेंट करवाई और यह निश्चय हुआ कि बीस गाँव में जिसके प्रथम–प्रथम गाय ब्यावे उसके यदि बछिया हो तो श्रीदेवंदमन को भेंट करें। इस तरह सहस्त्रावधि गायें श्रीजी के भेंट हो गई। तब दूध, दही, माखन और मट्ठा सब घर की गायों का ही अरोगने लगे।

४६. श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी के खरच आदि का प्रमाण बांधा

श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी के खरच के लिये एक वर्ष में एक लक्ष (१०००००) रूपये निश्चित किये उनमें ठौड़, लड्डू एवं अन्य सामग्री आदि अरोगने लगे। तथा उत्सव का सब प्रकार भी श्रीगुसांईजी ने बांधा। एक दहेंडी ब्रजवासियों के घर से राजभोग में आती और दूध, दही सब घर की गायों का ही अरोगते थे।

४७. व्रजवासियों की दहेंडी को बंद करना तथा पुनः प्रारंभ करना

एक दिन राजभोग की आरती के पीछे एक सेवक ने प्रसाद लिया तो ब्रजवासी की दहेंडी में रोटी का टूक देखा उसने श्रीगुसांईजी को इसकी खबर दी तब श्रीगुसांईजी ने दुबारा राजभोग समर्पित किया और व्रजवासियों की दहेंडी बंद कर दी। दूध घर में ही एक दहेंडी राजभोग में प्रारंभ कर दी। जब दूसरे दिन राजभोग आया तब श्रीनाथजी ने रामदास भीतरिया को आज्ञा दी कि व्रजवासियों की दहेंडी यहाँ धरा करो। सावधान होकर तुम उसे देख राजभोग में धरा करो। रामदासजी के मुख से श्रीनाथजी की आज्ञा को सुनकर श्रीगुसांईजी ने व्रजवासियों की दहेंडी राजभोग में धराई तब श्रीनाथजी ने राजभोग अरोगा।

४८. श्रीगुसांईजी ने गायों की खिड़क बनवाई और चार ग्वाल रक्खे

श्रीगुसांईजी ने गुलाल कुण्ड के मार्ग में गायों के लिये बड़ी खिड़क बनवाई उनमें सब गायें सुख से रह सकें और गायों की सेवा के लिये चार ग्वाल भी रक्खे। उनके नाम– कुंभनदास का पुत्र १. कृष्णदास २. गोपीनाथदास ३. गोपाल ग्वाल और ४. गंगा ग्वाल दिन में जब श्रीजी गायों को चराने के लिये जाय तब ये सब ग्वाल मण्डली भी साथ में जाय।

४९. श्रीजी ने गोपीवल्लभ में से आठ लड्डू चुराकर ग्वालों को बांटे

एक दिन प्याऊ के पास के ढाक के नीचे श्रीजी सब ग्वालों के साथ खेल रहे थे। उस समय पीनाथदास ग्वाल ने कहा कि हे श्रीदेवदमन! तुमको तो श्रीगुसांईजी लड्डू अरोगाते हैं। उनमें से मारे लिये भी लड्डू लाया करो तब श्रीनाथजी ने कहा कल लाऊंगा। तब श्रीनाथजी ने गोपीवल्लभ से आठ लड्डू चुराये और वन में ग्वाल मण्डली में सब ग्वालों को एक–एक लड्डू बांट दिया और पीनाथदास ग्वाल को दो लड्डू दिये उसमें से एक लड्डू तो वह खा गया और एक लड्डू उसने ध लिया। सांझ को जब घर आया और उस समय सब ग्वालों ने श्रीगुसांईजी को दण्डवत् की उस मय सब भीतरिया खड़े थे, और आज आठ लड्डू घट गये। उसकी चर्चा कर रहे थे, तब गोपीनाथ ाल ने लड्डू खोलकर दिखाया और कहा महाराज यह लड्डू तो नहीं है। तब श्रीगुसांईजी ने और न सबने कहा यह लड्डू उन आठ में से ही है। तब गोपीनाथ ग्वाल ने कहा श्रीदेवदमन आज आठ ड्डू लाये थे। तब एक–एक तो सब को बांट दिया और मुझे दो लड्डू दिये। तब उस लड्डू में से ीगुसांईजी ने कणिका लिया और सब वैष्णवों को कणिका–कणिका बांट दिया। इसके अनन्तर ीगुसांईजी ने आज्ञा की कि इस गोपीनाथदास ग्वाल को दो लड्डू नित्य दिया करो। यह श्रीजी का लेउ है और इसका नेग है और सब सेवकों का भी नेग सेवा के अनुसार बांध दिया।

५०. श्रीनाथजी ने चावल के खेत के रखवाले को दो लड्डू दिये

श्रीगिरिराज की तरहटी में एक श्रीजी का चांवल का खेत था। उसकी रखवाली दो लड़के रते थे। एक दिन एक लड़का भोजन करने गया उसको आने में बहुत विलम्ब हो गया तब दूसरा ड़का श्रीनाथजी की ध्वजा के सामने हाथ करके पुकारने लगा भैया श्रीदेवदमन मैं तेरे चावलों के ेत का रखवालिया हूँ और चौकी देता हूँ। मेरे लिये खाने का भिजवाना। यह सुनकर श्रीजी अपने टे में से दो लड्डू उसे दे आये। जब बंटे में दो लड्डू घटे तब आपस में चर्चा हुई। तब श्रीनाथजी ने ाज्ञा की कि मैनें चावल के खेत के रखवाले को लड्डू दिये हैं। तब उस लड़के को श्रीगुसांईजी ने ुलवाया और उसे सेवा में रक्खा। उसका नाम हरजी ग्वाल था। उसकी प्याऊ "हरजी की प्याऊ" ाम से प्रसिद्ध है वहाँ नित्य गायें जल पीती हैं।

५१. श्रीनाथजी के राजभोग में व्रजवासियों की दहेंडी नहीं आई इसलिये आपने सुवर्ण का कटोरा गुजरी के घर धरकर दही अरोगा

ब्रजवासियों की दहेंडी जो नित्य राजभोग में आती थी। वह एक दिन देर से आई। राजभोग ौ हो चुके थे तब वह दहेंडी भोग में नहीं धरी जा सकी। जब मध्याह्न काल के अनवसर हुए तब

श्रीनाथजी ने कहा कि आज तो मैनें व्रजवासियों का दही नहीं अरोगा। तब मंदिर में से एक सुवर्ण का कटोरा लेकर बरोली में रहने वाली शोभा गुजरी के घर पधारे और उससे कहा तू मुझे दही दे। तब उसने जो सुंदर दही जमा रक्खा था उसे सुवर्ण के कटोरे में दिया उसमें से जितनी इच्छा थी उतना अरोगकर सुवर्ण का कटोरा वहीं पटक कर श्याम घाट पधार गये। वहाँ जलधारा में से जल अरोगा और गोपीनाथदास ग्वाल, कुंभनदास, गोविन्दस्वामी प्रभृति सब मण्डली को देखा तथा चरती हुई गायों को भी देखा। वहाँ ग्वाल मण्डली से मिलकर आँख मिचोली का खेल खेले। इतने में शंखनाद हो गये तब आप निज मंदिर में पधारे। सब गायें भी खिड़क में आयी। मंदिर में सेवकों ने जब सुवर्ण का कटोरा नहीं देखा तो आपस में चर्चा करने लगे इतने में बरेली से शोभा गुजरी कटोरा लेकर आयी श्रीगुसांईजी को दिया और कहा महाराज श्रीदेवदमन हमारे घर दही खाने के लिये आये थे सो यह पात्र वे वहीं पटक आये सो मैं लाई हूँ। यह सुनकर श्रीगुसांईजी ने अपने मन में बड़ा पश्चाताप किया और मन में विचार किया कि हमने व्रजवासियों का दही भोग में नहीं रक्खा परंतु श्रीनाथजी ने तो उसे अरोगा ही वहाँ जाकर अरोगा उस दिन से दहेंडी शीघ्र मंगवाकर राजभोग में धरते।

५२. श्रीनाथजी ने चांदी के कटोरे में दहीभात अरोगा

एक दिन गोविन्द कुण्ड के मार्ग में श्रीनाथजी खड़े थे वहाँ एक व्रजवासिनी दहीभात बनाकर अपने लड़के के लिये ले जा रही थी उसमें से श्रीजी ने दहीभात मांगा। तब उसने कहा बर्तन लाओ तो उसमें दूं। तब आप मंदिर में से चांदी का कटोरा ले आये उसमें उसने दहीभात दे दिया। निज मंदिर में आकर उसी दुपहरी में अनवसर में ही अरोगकर कटोरा वहीं पटक दिया। उत्थापन के पीछे भीतरिया जब निज मंदिर में आये तो सखड़ी का कटोरा वहाँ पड़ा मिला तब पात्रों को माजने वाले से पूछा कि यह कटोरा क्यों नहीं मांजा तब उसने कहा मैनें तो मांज के धरा था पीछे का मुझे पता नहीं। तब श्रीनाथजी ने श्रीगुसांईजी को आज्ञा की कि पेठों की लच्छो गुजरी से हमने दहीभात लाकर अरोगा है। कटोरा मांज लो। तब श्रीगुसांईजी ने विचार किया आजकल ग्रीष्मकाल है इससे श्रीजी को दहीभात प्रिय है, इसलिये नित्य राजभोग में दहीभात समर्पित किया एवं सब भोगों में श्रीजी की इच्छानुसार अलग–अलग ऋतु के अनुसार सब प्रकार के भोगों की व्यवस्था की।

५३. श्रीनाथजी ने श्यामढाक के नीचे भोजन अरोगा

एक दिन श्रीजी ने गोपालदास को आज्ञा दी कि हम अप्सरा कुण्ड के ऊपर हैं। तू श्रीगुसांईजी से जाकर कहना कि तुम दहीभात की छाक (भोजन) लेकर शीघ्र आओ। हम श्याम ढाक के नीचे है। हमको भूख लगी है। तब गोपालदास ने जाकर विनती की उसे सुनकर श्रीगुसांईजी ने

द्ध होकर छाक सिद्ध किया, और श्याम ढाक के यहाँ लेकर पधारें। वहाँ श्रीजी ने श्रीबलदेवजी और ब सखाओं के साथ भोजन अरोगा। इस लीला का अनुभव कर श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में पधारे।

५४. श्रीजी श्रीगुसांईजी के घर मथुरा पधारे श्रीगिरिधरजी ने अपना सर्वस्व अर्पण किया श्रीजी होली खेलकर पुनः गिरिराज पर पधारे

एक समय श्रीगुसांईजी गुजरात पधारे थे। श्रीगिरिधरजी सेवा करते थे। श्रीनाथजी ने ोगिरिधरजी को आज्ञा दी कि मैं तुम्हारा घर देखने के लिये मथुरा चलूंगा। श्रीजी की ऐसी इच्छा ानकर श्रीगिरिधरजी ने रथ सिद्ध करवाया। खरास के बैल जोतकर दण्डोती शिला पर खड़ा केया। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिधरजी के कंधे के ऊपर चढ़कर दण्डोती शिला से रथ में राजे। तब श्रीगिरिधरजी रथ को हांककर अपने घर मथुरा में ले गये और वहाँ सतघरा में ीगुसांईजी के घर पधराये। संवत् १६२३ फाल्गुन वदी ७ गुरूवार के दिन पाट बैठाये। यह टोत्सव सातों घरों में मानते हैं और प्रसिद्ध है। जिस दिन श्रीनाथजी श्रीगुसांईजी के घर पधारे उस देन श्रीगिरिधरजी ने सर्वस्व समर्पण किया और एक परदनी पहिर के घर के बाहर निकल कर खड़े ो गये। बहू, बेटी भी एक-एक साड़ी पहिनकर खड़ी रही, द्रव्य, आभूषण, अमूल्य वस्त्र रथ, अश्व ादि सब अर्पण कर दिया था। तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि हमारी नथ लाओ इस तहर सब वस्तु ंभालकर ले ली यही तो अंगीकार का लक्षण है।

५५. श्रीजी का होली खेलना

श्रीगिरिधरजी आदि ने श्रीनाथजी को होली खिलाई। श्रीनाथजी ने सब बहू-बेटियों को ाज्ञा दी कि तुम मुझे होली खिलाओ। तब प्रत्येक बहू-बेटी ने श्रीनाथजी को होली खिलाई चोवा की चोली पहराई मोहनी श्रृंगार किया। परस्पर अनिर्वचनीय सुख हुआ। फगुवा में मुरली को छीन ली जब मन माना फगुवा दिया तब मुरली दी।

५६. श्रीजी का श्रीगिरिराज पधारना और श्रीगुसांईजी से मिलना

यह सब समाचार सुनकर श्रीगुसांईजी घर पधारे श्रीगुसांईजी को पधारे जानकर श्रीजी ने श्रीगिरिधरजी को आज्ञा की कि मुझे श्रीगुसांईजी श्रीगिरिराज पर नहीं देखेंगे तो बहुत खेद करेंगे। इसलिये मुझे आज ही श्रीगिरिराज पर ले चलो। तब श्रीगोपीवल्लभ अरोगकर श्रीजी रथ में सवार हुए और श्रीगिरिधरजी को आज्ञा की कि तुम रथ को जल्दी जल्दी चलाओ। आज राजभोग और शयनभोग दोनों इकट्ठे श्रीगिरिराज पर अरोगूंगा। जब चार घड़ी पिछला दिन रहा उस समय

श्रीगिरिराज पधारे। दण्डोती शिला पर रथ में से उतरकर श्रीगिरिधरजी के कंधें पर चढ़कर निज मंदिर में पधारे। वहाँ से कूदकर चरण चौकी पर जा विराजे। यह लीला अत्यन्त अलौकिक है तर्कागोचर है। उस दिन नृसिंह चतुर्दशी थी इसलिये सब उत्सव श्रीगिरिराज पर पधारकर किये। राजभोग और शयनभोग इकट्ठे किये इससे नृसिंह चतुर्दशी के दिन राजभोग और शयनभोग इकट्ठे ही होते हैं। दूसरे दिन पूर्णिमा थी उस दिन श्रीगुसांईजी गुजरात के पीछे श्रीगिरिराज पधारे। जब यह सब वृत्तांत सुना तो कहने लगे श्रीगोवर्द्धननाथजी को श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने श्रीगिरिराज ऊपर पाट बैठाये। इससे कृपा करके हमें श्रीगिरिराज पर दर्शन देते हैं यही हमारी अभिलाषा है। श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी के कपोलों का स्पर्श करके पूछा बाबा आप श्रीमथुराजी किस कारण से पधारे तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि सब बहू–बेटियों को देखने गया था। इस प्रकार परस्पर मिलकर के बड़े आनन्दित हुए।

५७. श्रीजी के कवाय का टूक वृक्ष की डाली में उलझ गया

एक दिन श्रीनाथजी गोविन्दस्वामी के साथ श्याम ढाक पर खेल रहे थे उस समय मंदिर में शंखनाद हुए तब श्रीजी शीघ्रता से पधारे। इसलिये कवाय का टूक डाली में उलझ गया तब श्रीगुसांईजी ने भोग समय जब दर्शन किये तो उन्हें खेद हुआ न जाने यह क्या कारण है। उसी समय श्रीगोविन्द वहाँ से आ गये और वह कवाय का टूक श्रीगुसांईजी को दिया और कहा तुम्हारा लड़का बहुत चपल है। तब उस कवाय के टूक को लेकर श्रीगुसांईजी ने कवाय में लगा दिया और रामदास को आज्ञा की कि शंखनाद करने के बाद थोड़ी देर ठहरकर जब श्रीजी मंदिर में पधारें तब टेरा खोलना।

५८. श्रीजी ने छोटे बागा को छोटा स्वरूप बनाकर अंगीकार किया

एक समय श्रीगुसांईजी ने श्याम बागा करवाया उसके मेल का वस्त्र कम पड़ गया इससे बागा कुछ छोटा हो गया जिस समय श्रीगुसांईजी ने श्रीजी को बागा पहराया तब उसी बागा के अनुसार आपने स्वरूप धारण करके उसे अंगीकार किया। तब श्रीगुसांईजी बहुत प्रसन्न हुए उस समय श्रीगिरिधरजी और श्रीगोकुलनाथजी ने एक श्लोक उस समय की लीला से प्रसन्न होकर आपको सुनाया वह श्लोक–

श्यामकंचुकनिदर्शनेन मन्मानसेऽप्यणुतरेऽपि महान् सः।
गोकुलैकजनजीवनमूर्तिर्मास्यति स्वकृपयैव कृपालुः।।१।।

५९. श्रीजी रूपमंजरी के साथ चौपड़ खेलते

एक दिन श्रीनाथजी एक ग्वालिया की बेटी रूपमंजरी थी। उसके साथ चौपड़ खेलने पधारे। चार प्रहर रात्रि चौपड़ खेले और वीणा सुनी। वह वीणा अच्छी बजाती थी। चार प्रहर रात्रि वहाँ ही बिराजे। नन्ददासजी की संगति के कारण वह गुणगान अच्छा करती। नन्ददासजी ने रूपमंजरी ग्रंथ बनाया उसमें चौपाई रक्खी–

रूपमंजरी को हियो। सो गिरिधर आपनों आलय कियौ।।

पीछे प्रातःकाल निज मंदिर में पधारे। मंगला के समय श्रीजी के नेत्र कमल आरक्त देखकर श्रीगुसांईजी ने पूछा रात्रि जागरण कहाँ हुआ। तब श्रीनाथजी ने सारा वृत्तांत सुनाया। रूपमंजरी के यहाँ चौपड़ खेलने गया था। तब श्रीगुसांईजी ने मना किया कि लौकिक शरीर के लिये इतना दूर परिश्रम नहीं करना चाहिये। यहाँ व्रजभक्तों के साथ सुखपूर्वक चौपड़ खेलो। उसी दिन से मंदिर में चौपड़ बिछने लगी।

६०. अकबर बादशाह की बैगम बीबी ताज

एक अलीखान पठान था, उसकी बेटी बीबी ताज थी जिसकी धमार है– **"निरखत आवत ताज को प्रभु गावत होरी गीत"** वह अकबर बादशाह की बेगम थी और श्रीगुसांईजी की सेवक थी। उसके साथ श्रीनाथजी आगरे में शतरंज खेलते थे। यह बात जब श्रीगुसांईजी ने जानी तो श्रीजी को मना कर दिया और उसी दिन से श्रीगुसांईजी की आज्ञा से मंदिर में शतरंज बिछने लगी। एक दिन देशाधिपति ने श्रीगिरिराज की तरहटी में डेरा किया, तब उसकी बेगम ताज श्रीजी के दर्शन करने को आई। उसे श्रीनाथजी ने साक्षात् दर्शन दिये और उसे संकेत किया, तब उसकी अत्यन्त आर्ति बढ़ी और श्रीनाथजी से मिलने के लिये दोड़ी और बोली मैं श्रीनाथजी से मिलूंगी। उस समय वृन्दावनदास जौहरी जिसकी लड़की के साथ ताज शतरंज खेलती थी उसने उसका हाथ पकड़ लिया और नीचे ले गई। तब तरहटी में आते ही उसका लौकिक देह छूट गया और अलौकिक देह से श्रीजी की लीला में प्राप्त हो गयी। तब सब को भय हुआ कि न जाने बादशाह अब क्या कहेगा। परन्तु श्रीनाथजी के प्रताप से उसने कुछ नहीं कहा उसने केवल यही कहा कि जहाँ की वस्तु वह वहाँ चली गयी। ऐसा कहकर दिल्ली को लौट गया। ऐसे ही कृष्णदास अधिकारी ने वैश्या को मिलाई। ऐसे अनेक चरित्र है उनकी गणना तो शेष महानाग भी करे तो भी पार नहीं पा सकता।

६१. श्रीनाथजी ने अटारी को गिराने की आज्ञा दी

बिलछू के सामने श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने एक बारी रखवाई थी उसमें से श्रीआचार्यजी महाप्रभु ग्वाल मण्डली को देखते। एक दिन श्रीगोकुलनाथजी शृंगार कर रहे थे उस समय उस बारी में से धूप आयी ग्रीष्म ऋतु थी इसलिये धूप अच्छी नहीं लगी तब उसके सामने एक अटारी करवाई उसे बनवा कर श्रीगोकुलनाथजी तो श्रीगोकुल को पधारे। तब श्रीजी ने मोहना भंगी को आज्ञा दी कि तू श्रीगोकुलनाथजी को जाकर कहना की बारी के सामने जो अटारी बनवाई थी उसे तुम तुडवा दो मुझे बिलछू दिखाई नहीं देता। यह सुनकर वह दौड़कर अडीग से यहाँ आकर श्रीगोकुलनाथजी से कहा कि महाराज! यद्यपि छोटे मुंह बड़ी बात है किंतु श्रीनाथजी ने यह आज्ञा दी है कि अटारी को तुडवा डालो मुझे बिलछू दिखाई नहीं देता। तब श्रीगोकुलनाथजी ने यह आज्ञा दी कि अटारी को तुडवा डालो मुझे बिलछू दिखाई नहीं देता। तब श्रीगोकुलनाथजी ने उससे पूछा क्या श्रीनाथजी मेरा नाम जानते हैं? गद्‌गद् कंठ होकर दो चार बार उसके मुंह से कहलवाया और कहा कि श्रीजी ने कैसी आज्ञा की है वे वहीं से लौट आये और श्रीजी द्वार पधार श्रीनाथजी को सामग्री अरोगाई और क्षमा मांगकर उस अटारी को तुडवा दिया तब श्रीनाथजी बहुत प्रसन्न हुए।

६२. कल्याण ज्योतिषी की कथा तथा श्रीगिरिधर जी का श्रीमथुरेशजी के स्वरूप में लीन हो जाना

श्रीगिरिधिरजी का सेवक एक कल्याण ज्योतिषी वैष्णव था। श्रीजी के आगे कीर्तन करता। एक दिन श्रीगिरिधरजी श्रीनाथजी को बीड़ी अरोगा रहे थे। उस समय कल्याण ज्योतिषी यह कीर्तन कर रहा था– **"मेरे तो कान्ह है री प्राण सखि आन ध्यान नाहिन मेरे। दुःख के हरण सुख के करण"** इत्यादि। इस कीर्तन को करते हुए उसके मन में यह विचार आया कि श्रीगुसांईजी के अष्टछाप के कीर्तन करते तब तो श्रीजी हँसते अब तो हँसते बोलते नहीं है। इतना मन में संदेह होते ही उसके मन की अन्तर्यामी श्रीजी ने जान ली तब बीड़ी अरोगते खूब हँसे और श्रीगिरिधरजी से आज्ञा की कि यह वैष्णव कीर्तन अच्छे करता है। इस मुक्ति स्थान का दर्शन कल्याण ज्योतिषी को हुआ। उस समय श्रीगिरिधरजी ने श्रीजी से कहा यह घटा किनपे बरसी है। पीछे उसका कारण समझकर श्रीगोकुलनाथजी को आज्ञा की कि श्रीनाथजी सदा आदि, मध्य, अवसान में एक रस विराजते हैं। श्रीगुसांईजी के समय में शुद्ध–पुष्टि–सृष्टि थी इसलिये सबसे संभाषण करते थे। अब मिश्रित पुष्टि सृष्टि है। इससे सेवा सबकी अंगीकार करते है, परंतु संभाषण शुद्ध–पुष्टि–सृष्टि से ही करते हैं। इस प्रकार आज्ञा करते–करते श्रीगिरिधरजी श्रीमथुरेशजी के मुखारविन्द में लीन हो गये।

ब माला का प्रसंग आया उस समय श्रीगोकुलनाथजी ने तो धर्म की रक्षा की और श्रीगिरिधरजी श्रीमथुरेशजी का श्रृंगार करते थे और श्रीदामोदरजी श्रीजी के पास रहते। जिस समय मथुरेशजी ने उबासी ली उसी में श्रीगिरिधरजी लीन हो गये। इसे देख दोनों भाई शोक करने लगे। तब श्रीनाथजी ने यह आज्ञा दी कि शोक मत करो इस उपरने से लौकिक कार्य करवाओ।

६३. श्रीदामोदर जी गादी विराजे

तब श्रीदामोदरजी गादी तकिया पर विराजे। उस समय श्रीनाथजी की गोलख में तीन लाख रुपये भेंट के थे उन्हें भण्डारी ने छिपा दिये। तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि जान अजान वृक्ष के नीचे तीन लक्ष मुद्रा धरी है भण्डारी ने चुराकर रक्खी है। उसको तुम मंगवा लो। तब दामोदरजी ने मंगवा ली। श्रीनाथजी देवी द्रव्य को इस प्रकार अंगीकार करते हैं।

६४. कटार बांधने का श्रृंगार

एक समय श्रीमुरलीधरजी का मनोरथ कटार बांधने का हुआ तब तिलकायत श्रीगुसांईजी ने आज्ञा की कि विजया दशमी के दिन धरूंगा उस दिन वैसा ही श्रृंगार हुआ।

६५. भाइयों के झगड़े में विट्ठलरायजी का आगरे पधारना श्रीजी से प्रार्थना करना श्रीजी की आज्ञा अनुसार बादशाह ने झगड़े को मिटाया

भाई बंधुओं के झगड़े के कारण एक दिन श्रीविट्ठलरायजी आगरे पधारे। नित्य उपद्रव देखकर चित्त को बड़ा खेद हुआ। श्रीजी से निवेदन किया कि उनके पक्ष पर तो बादशाह है मेरे पक्ष में तो कोई नहीं है तब श्रीजी ने उन्हें दर्शन दिये लाल छड़ी हाथ में थी। श्रीविट्ठलरायजी के पास में उठकर मस्तक पर श्रीहस्त रक्खा और समाधान किया तथा आज्ञा की कि जब श्रीगुसांईजी श्रीगिरिराज पर पधारे तब सातों बालकों को मेरे आगे खड़े किये जाय और मुझसे कहा कि जिस पर आपकी प्रसन्न्ता हो उससे अपनी सेवा करवावें। तब मैनें श्रीगिरिधरजी का हस्त ग्रहण किया और आज्ञा की कि सब बालक मिलकर जिस कार्य को करेंगे उस कार्य को अकेले श्रीगिरिधरजी कर सकते हैं। इनने मुझे अपने घर मथुरा में पधराया और दण्डोती शिला पर से इन अकेले ने ही मुझे कंधे पर चढ़ाकर मंदिर तक गये तथा अडेल से व्रज को पधारते समय श्रीनवनीतप्रियजी का संपुट श्रीगुसांईजी के छहों बालकों से नहीं उठा तब श्रीगिरिधरजी ने उठाया इसलिये वर्ष के जो तीन सौ साठ दिन है उनमें उत्सव के मुख्य श्रृंगार के साठ दिन है उनके श्रृंगार तो ये ही करेंगे और तीन सौ दिन के श्रृंगार श्रीगुसांईजी के बालक करें ऐसी आज्ञा दी और आज्ञा देकर श्रीगिरिराज पर पधार

गये और पीछे बादशाह ने भी दूसरे दिन जैसी आज्ञा श्रीनाथजी ने दी थी वैसा ही निर्णय लिखकर श्रीविट्ठलरायजी को दे दिया। श्रीविट्ठलरायजी ने भी ऐसा ही एक लेख लिख दिया तब सब झगड़ा शांत हो गया। फिर श्रीविट्ठलरायजी अपने घर पधारे।

६६. श्रीविट्ठलरायजी ने श्रीजी का टिपारे का शृंगार किया

श्रीविट्ठलरायजी श्रीजी का टिपारे का शृंगार अच्छा करते। वह श्रीनाथजी को बहुत प्रिय लगता। महीने में दो–चार बार आज्ञा करके टिपारे का शृंगार करवाते। दर्पण को देखकर श्रीनाथजी बहुत प्रसन्न होते। एक समय श्रीविट्ठलरायजी बड़े शहर को पधारे तब श्रीगुसांईजी के किसी बालक ने टिपारे के शृंगार करने का मनोरथ किया तब श्रीनाथजी ने उसे मना कर दिया और आज्ञा की कि जब श्रीविट्ठलरायजी आयेंगे तब टिपारे का शृंगार करेंगे। जब विट्ठलरायजी पीछे पधारे तब टिपारे का शृंगार किया। श्रीनाथजी स्वकियों के इतने पक्षपाती हैं।

६७. श्रीजी को श्रीगिरिधरजी ने वसंत खिलाई और डोल झुलाया

श्रीविट्ठलरायजी के लालजी श्रीगिरिधरजी एक समय लाहोर पधारे उस समय डोल के बारह दिन ही बाकी थे। तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि "जब तुम मुझे वसंत खिलाओगे तब खेलूंगा" और वैष्णव एक लक्ष मुद्रा भेंट करेगा उसे लेकर जल्दी चले आना। दूसरे दिन उतनी भेंट आ गई उसे लेकर बारह दिन में श्रीगिरिराज पधार गये और श्रीजी को वसंत खिलाये। उसके अनन्तर डोल झुलाये तब श्रीजी बहुत प्रसन्न हुए। इस प्रकार श्रीनाथजी श्रीगिरिधरजी की कानि से टीकेतों का पक्षपात करते हैं और श्रीगुसांईजी की कानि से वल्लभकुल की सेवा की अपेक्षा रखते हैं परंतु मुख्य सेवा तो टीकेतों के पास से ही करवाते हैं।

६८. श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीजी को फाग तथा वसंत खिलाई

ऐसे ही श्रीगोकुलनाथजी काश्मीर पधारे जब माला प्रसंग का दिग्विजय करके पीछे पधारे उस समय फाल्गुन मास बीत चुका था। श्रीगोकुलनाथजी ने तो फाग खिलाई ही नहीं। इसलिये श्रीजी ने एक दूधघरिया ग्वाल को आज्ञा की कि तू वल्लभ से कहना कि मुझे वसंत खिलाये। तब उसने श्रीगोकुलनाथजी को चैत्र वदि ११ के दिन कही तब उस दिन उनने वसंत खिलाई और गुलाब के फूलों की मण्डली हुई। आसपास में केला माधुरी की लता की कुंज हुई मुकुट का शृंगार हुआ और यह धमार गाई "**सदा वसंत रहत वृन्दावन लता लता द्रुम डोले।**" इस प्रकार श्रीजी वल्लभकुल की अपेक्षा रखते हैं। एक दिन श्रीलक्ष्मणजी महाराज जो श्रीरघुनाथजी के वंश में थे वे गानकला में

बहुत कुशल थे। सायं शृंगार बड़े होने के अनन्तर यह पद गा रहे थे **"दुहियो दुहावों भूल गयो"** और एक दिन फाल्गुन में धमार गाये। जब हथिया पोल के सामने संपूर्ण हुई उसके बाद चार घड़ी तक अनवसर के अनन्तर भी गाते रहे। श्रीगोकुलनाथजी ने पूछा इस समय कीर्तन क्यों हो रहा है तब किसी ने कहा लक्ष्मणजी गा रहे हैं। श्रीजी ने श्रीगोकुलनाथजी को स्वप्न में आज्ञा दी कि यह जैसे गाता है उसे गाने देना इसकी यह ही सेवा है।

६९. श्रीगुसांई का मेवाड़ के रास्ते से होकर द्वारका पधारना और सिंहाड नामक स्थल में श्रीजी के पधारने की भविष्यवाणी करना और राणाजी तथा राणी आदि को सेवक करना

एक समय श्रीगुसांईजी मेवाड़ के रास्ते से होकर श्रीद्वारका पधारे वहाँ सिंहाड नामक एक थल को बड़ा रमणीय देखकर श्रीगुसांईजी ने बावा हरिवंशजी को आज्ञा की कि "इस स्थल में किसी समय श्रीनाथजी विराजेंगे और हमारे सामने तो श्रीगिरिराज को छोड़कर नहीं पधारेंगे" तब श्रीगुसांईजी ने वहाँ दो दिन विश्राम किया। पीछे राणाजी श्रीउदयसिंहजी दर्शन के लिये आये मोहर और एक गाँव भेंट किया तब श्रीगुसांईजी ने परसादी वस्त्र और समाधान किया उसे ग्रहण कर दण्डवत् कर अपने घर गये। इसके अनन्तर उनकी राणीजी दर्शन के लिये आई सो उनमें मीराबाई राणीजी की बेटी मुख्य वह भी दर्शन के लिये आयी और राणीजी के कुंवर की राणी अजबकुंवर थी उसने श्रीगुसांईजी के पास से ब्रह्मसंबंध लिया श्रीगुसांईजी के दर्शन से स्वरूपासक्ति हुई। जब श्रीगुसांईजी द्वारका पधारने की इच्छा करे तब उसे मूर्च्छा आ जाय। तब श्रीगुसांईजी ने आज्ञा की कि हमारा तो यहाँ रहना होगा नहीं श्रीजी तुमको नित्य दर्शन देंगे ऐसी आज्ञा करके श्रीगुसांईजी द्वारका पधार गये।

७०. श्रीजी का नित्य मेवाड़ पधारना और अजबकुंवरी से चौपड़ खेलना तथा मेवाड़ पधारने का नियम करना

श्रीनाथजी श्रीअजबकुंवरबाई को नित्य मेवाड़ में पधारकर दर्शन देते थे और उसके साथ चौपड़ खेलते थे और पीछे श्रीगिरिराज पधार जाते थे। एक दिन अजबकुंवरबाई ने श्रीजी से प्रार्थना की कि "आपको आने–जाने में परिश्रम होता है इससे आप मेवाड़ में विराजें तो मुझे नित्य दर्शन होते रहे" तब श्रीजी ने आज्ञा की कि श्रीगुसांईजी भूतल पर जब तक विराजते हैं तब तक तो श्रीगिरिराज को छोड़कर नहीं आऊँगा पीछे मेवाड़ में अवश्य आऊँगा और बहुत वर्ष पर्यन्त मेवाड़ में ही

विराजूंगा। जब फिर श्रीगुसांईजी अपने कुल में प्रकट होकर मुझे व्रज में पधरावेंगे तब ब्रज मे पधारूंगा और बहुत वर्ष पर्यन्त श्रीगिरिराज पर क्रीड़ा करूंगा ऐसी आज्ञा करके श्रीगिरिराज पधारे।

७१. श्रीनाथजी को मेवाड़ पधारने की जब याद आयी तब एक असुर को श्रीगिरिराज से उठा देने की प्रेरणा की

कुछ कालान्तर में श्रीजी को जब मेवाड़ पधारने की याद आयी तब आपने विचार किया कि "मेवाड़ में तो अवश्य पधारना है और श्रीआचार्यजी ने तो मुझे श्रीगिरिराज पर पाट बैठाया है इससे वल्लभकुल तो प्रायः उठावेंगे नहीं बलात् उठाने के लिये असुर को प्रेरणा करनी चाहिये जिससे वह मुझे उठा दे" तब एक समय श्रीवल्लभजी महाराज को स्वप्न हुआ कि श्रीनाथजी श्रीगिरिराज से उठकर किसी देश में पधार रहे हैं। शयन आरती हो जाय और सेवक सब जब घर चले जाय तब एक म्लेच्छ आवे और दाढ़ी से जगमोहन तथा कमलचौक को झाडे इस प्रकार बारह वर्ष पर्यन्त उसने झाडा परन्तु इसका पता किसी को न लगा। वह योग बल से आकाश मार्ग से आता था तब एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी उस पर प्रसन्न हो गये और अपने बंटा में से दो प्रसादी बीड़ा उसे दिये और आज्ञा की कि "बावन वर्ष पर्यन्त मैनें तुझे राज्य दिया तू मुझे श्रीगिरिराज पर से उठा दे और आज पीछे तू मेरे मंदिर में मत आना। मेरा मंदिर तो श्रीगिरिराजजी में गुप्त हो जायेगा। तब तू वहाँ मस्जिद बनवाकर दण्डवत् किया करना आगे अंदर मत जाना" यह आज्ञा सुनकर यवन आगरे गया और श्रीजी की आज्ञा के अनुसार उसने प्रबल राज्य किया।

७२. देशाधिपति ने एक हलकारे को श्रीजी द्वार भेजा

जब उस देशाधिपति ने एक हलकारे को श्रीजी द्वार भेजा सो उस हलकारे ने आकर श्रीविट्ठलरायजी के पुत्र श्रीगोविन्दजी थे उनसे कहा और टीकेत श्रीगिरिधरजी के पुत्र श्रीदाऊजी थे वे तो पन्द्रह वर्ष के बालक ही थे। श्रीगिरिधरजी के छोटे भाई श्रीगोविन्दजी थे सो श्रीजी के यहाँ अधिकार करते उनसे हलकारे ने कहा देशाधिपति ने कहा है कि गोकुल के फकीरों से कहो कि हमको कुछ करामात दिखलाओ नहीं तो हमारे देश से उठ जाओ "तब श्रीगोविन्दजी ने श्रीजी से पूछा" देशाधिपति ने करामात मांगी है इस मार्ग में तो आपकी कृपा ही करामात है यदि आप आज्ञा दें तो हम आपको करामात दिखावें" तब श्रीजी ने कुछ उत्तर नहीं दिया। तब श्रीगोविन्दजी को बड़ी चिंता हुई और विचार किया कि श्रीजी की आज्ञा के बिना कुछ चमत्कार दिखाया नहीं जा सकता और नहीं दिखावेंगे तो यहाँ स्थिति नहीं रह सकती अब क्या उपाय करना चाहिये।

०३. श्रीगिरिधारीजी के लीला में पधारने आदि का संक्षिप्त वृत्तांत

श्रीगिरिधारीजी श्रीगोविन्दजी के बड़े भाई थे उनके ऊपर श्रीनाथजी की बहुत कृपा थी। उन श्रीगिरिधारीजी ने देशाधिपति के परवाने के ऊपर हस्ताक्षर नहीं किये और कहा कि "जहाँ तक हम हैं तब तक तेरे से अथवा तेरी गद्दी (राज्य) से कुछ नहीं हो सकता।" ऐसा कहकर श्रीजी द्वार पधारे। इन श्रीगिरिधारीजी का गोवर्द्धन के ब्राह्मणों और गोरवाओं से विरोध हो गया था तब इनने दान घाटी का रास्ता ही छोड़ दिया और गोविन्दकुण्ड पर टांकी के पत्थरों को कटवा कर गोविन्दघाटी बनवाई इसके प्रायश्चित में उनको वरछी लगी इससे लीला में पधारे सो लीला में सदा सर्वदा श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा करते हैं।

०४. श्रीगिरिधारीजी जब लीला में पधारे तब श्रीगोविन्दजी को श्रीजी ने मेवाड़ पधारने की आज्ञा की उसका सविस्तार वृत्तांत

श्रीनाथजी ने श्रीगिरिधारीजी को आज्ञा दी कि श्रीगोविन्दजी बहुत चिंता करते हैं। तुम्हें याद करते हैं। उन्हें तुम दर्शन दो और हमारे मेवाड़ में पधारने का वृत्तांत उनसे कहो तब श्रीगिरिधारीजी अर्धरात्रि के समय श्रीगोविन्दजी के पास आये और उन्हें दर्शन दिये। श्रीगोविन्दजी ने एक पट्टा बिछा दिया उस पर आप बिराजे। पहले तो नवरत्न का एक श्लोक कहा–

चिंता कापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापीति।

भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्।।

तदनन्तर यह आज्ञा की कि श्रीजी की ऐसी इच्छा है कि यहाँ गुप्त क्रीड़ा करेंगे और श्रीआचार्यजी ने श्रीजी की जन्म पत्रिका बनाई और श्रीगोपाल नाम धरा इससे गायों की रक्षा होगी। यह म्लेच्छ तो निमित्त मात्र हैं। आगे के वैष्णवों की मनोरथ सिद्धि करने के लिये श्रीजी पधारेंगे इसलिये रथ सिद्ध करो। कल सर्वसिद्धा त्रयोदशी है अतः जब एक घड़ी दिन शेष रहे उस समय श्रीजी विजय करेंगे। इसलिये और कोई चमत्कार दिखाने की आवश्यकता नहीं है। अपने को तो श्रीजी की इच्छा के अनुसार करना है। जहाँ–जहाँ आप अपनी इच्छा से पधारें अपने को उसी के अनुसार करना है। बूढ़े बाबा महादेव मसाल लेकर तुम्हारे रथ के आगे चलेंगे सो रात्रि में तो आगरे तक चलेंगे और फिर दिन में पधारेंगे दुहरे डेरा मार्ग में रखना उन्हें मंगवा लो। श्रीजी की जो इच्छा होगी गंगाबाई को आज्ञा करेंगे। तुम गंगाबाई से पूछकर सब करना, ब्रजवासी स्पर्श करेंगे और गाली देंगे। तब रथ चलेगा। इसी प्रकार जब व्रजवासी गाली देंगे तब श्रीजी उठेंगे। ऐसी आज्ञा करके श्रीगिरिधारीजी श्रीजी के पास शैय्या मंदिर में पधारे।

७५. मेवाड़ पधारने के पहले श्रीगिरिराज से आगरा पधारना

सवेरे राजभोग आरती शीघ्र करके रथ अधिवासन किया। श्रृंगार कर रथ सिद्ध किया। रथ में खरास के बैलों को जोतकर दण्डोती शिला पर लाकर खड़ा किया। तदनन्तर उस्ता को बुलाकर सब उपचार करवाये और श्रीगोविन्दजी तथा श्रीबालकृष्णजी तथा श्रीवल्लभजी तीनों भाइयों ने मिलकर साष्टांग दण्डवत् कर प्रार्थना की फिर सब गोस्वामी और सब सेवकों ने मिलकर रथ में पधराये तब भी आप उठे नहीं तब व्रजवासियों को बुलाये तब उन्होंने गाली देकर कहा कि "उठेगो कि नहीं ऐसे तैसे कहा यहाँ ही सबन के मूंड कटावेगो" यह सुनकर श्रीजी बहुत हँसे और प्रसन्न मुखकमल से तुरन्त उठे और रथ में आकर विराज गये। मिति आसोज सुदि १५ शुक्रवार संवत् १७२६ की रात्रि की पिछली प्रहर में श्रीवल्लभजी महाराज ने पना सिद्ध कराया और अरोगाया फिर रथ हाँका परंतु वह चला नहीं जब सब गोस्वामियों ने विनती की तब श्रीजी ने आज्ञा की कि "गंगाबाई को गाड़ी में बैठाकर ले चलो वह रथ के पीछे चलनी चाहिये" तब गंगाबाई को तत्काल लाये और गाड़ी में बिठाकर रथ के पीछे उसको रक्खा। जहाँ रथ अटकता था तब सब इकट्ठे होकर गंगाबाई से पूछते तब वहाँ सब वृत्तांत गंगाबाई कहती। इस तरह एक रात्रि में आगरे बूढ़े बाबा आगे प्रकाश करते हुए पधार रहे थे। आगरे में आपकी हवेली थी वहाँ पधारे।

७६. दो जलधरिया सेवा और सम्भा का अलौकिक पराक्रम

दो जलधरिया जो श्रीजी के यहाँ जल भरते थे। जिस समय देशाधिपति के उस्ता मंदिर तोड़ने के लिये आये। उस समय उनके साथ २०० (दो सौ) म्लेच्छ थे। उन जलधारियों ने उनको सिंह पोल के अंदर नहीं घुसने दिया। उनसे लड़े और उन सबको मार डाला। केवल उस्ता को छोड़ दिया, जिससे वह जाकर इस बात की खबर दे यदि यह और म्लेच्छों को लायेगा तो उन्हें भी हम मारेंगे। उनमें ऐसा आवेश हो गया कि हाथ में तलवार लेकर छः महीने तक खड़े ही रहे। भूख प्यास ने कोई बाधा नहीं की। उन्होंने डेढ महीने तक मंदिर को गिराने नहीं दिया। फिर दूसरा उस्ता सत्रह बार ५०० (पाँच सौ) म्लेच्छ लेकर आया परंतु उन दोनों भाइयों ने सबको मार डाला। तब देशाधिपति ने वजीर को हुक्म दिया कि तुम जाओ। तब वजीर ने बहुत से म्लेच्छों को साथ लेकर चढ़ाई की। तब श्रीजी ने विचार किया कि इन दोनों भाइयों में ऐसा आवेश हो गया है कि ये सब म्लेच्छों को मारेंगे। इसलिये इन्हें दर्शन देना चाहिये। तब आगरे से पधारकर सिंह पोल पर उन दोनों को दर्शन दिये और आज्ञा की "तुम में तो श्रीगिरिधारीजी ने ऐसा आवेश धर दिया है कि तुम सब म्लेच्छों को मारोगे परंतु मेरी इच्छा नहीं है। अभी तो जहाँ–जहाँ मैनें भक्तों को वचन दिया है वहाँ–वहाँ मुझे पधारना है। उन भक्तों के मनोरथों को सिद्ध करके कालान्तर में पुनः मैं व्रज पधारूंगा। उस समय

सब कार्य सिद्ध होंगे। तुम मेरी लीला में आओ युद्ध मत करो।'' ऐसा कहकर श्रीनाथजी आगरा पधार गये। फिर श्रीजी की इच्छा से उनकी दिव्य दृष्टि हो गई, तब उन दोनों ने सारे गिरिराज को रत्नमय देखा और गिरिराज में अनेक मंदिर रत्नमय देखे। उनमें इस मंदिर को भी रत्नमय देखा और गिरिराज में लीन देखा। बाहर का दरवाजा जहाँ नगारे बजते हैं वहाँ एक मस्जिद देखी और एक म्लेच्छ को देखा। वह अपनी दाढ़ी से मंदिर झाड़ रहा था। जब उन दोनों भाइयों को संपूर्ण ज्ञान हो गया तब शस्त्र डाल दिये और लौकिक शरीर को छोड़कर श्रीजी की लीला में प्राप्त हो गये। इन दोनों भाइयों का नाम सेवा और सम्भा था।

७७. अठारहवीं बार बादशाह की फौज श्रीगिरिराज पर आई और मस्जिद बनवाई

अठारहवीं बार सुथार उस्ता और बादशाह का नवाब सेना साथ में लेकर आये और देखा तो श्रीजी का मंदिर तो कहीं दिखाई ही नहीं दिया तब वहाँ मस्जिद बनाकर चले गये।

७८. श्रीजी आगरे पधारे उसका विस्तृत वृत्तांत

श्रीनाथजी श्रीगिरिराज से जब आगरा पधारे उस समय छः घडी पिछली रात बाकी थी। उस समय दरवाजे सब खुले थे, और चौकीदार सब निद्रावश थे। किसी ने कुछ रोक टोक नहीं की। सवेरे ही श्रीनाथजी अपनी हवेली में पधारकर आप रथ में से उतरे। हवेली में एक स्थल था। वहाँ विराजे और आज्ञा की कि यहाँ अन्नकूट उत्सव करके आगे चलेंगे। जिस समय श्रीजी आगरे में पधारे उस समय देशाधिपति कंकरियों के ऊपर बिछोना बिछाकर अपनी मस्जिद में सोता था। वहाँ श्रीनाथजी ने जाकर उसकी पीठ में लात मारी और स्वप्न में आज्ञा की कि ''आज में आगरे में आ गया हूँ तू मेरा क्या कर सकता है मैं अपनी इच्छा से उठकर आया हूँ'' तब म्लेच्छ जग गया परंतु श्रीजी दिखाई नहीं दिये। पीठ में लात मारी इसलिये चरण कमल का चिह्न अंकित हो गया। वह जहाँ तक जीता रहा चिह्न बराबर वैसा ही रहा। उसने किसी से कहा नहीं मन की बात को मन में ही रखता था। श्रीजी की आराधना गुप्त रूप से करता। दो रोटी जौ की और घास की भाजी खाता और पत्थरों पर सोता। श्रीजी के दर्शन के लिये इस प्रकार की तपस्या करता।

७९. श्री नवनीतप्रियजी को आगरे पधराये उसका विस्तृत वृत्तांत

दोनों भाइयों के साथ श्रीगोविन्दजी तो श्रीजी के संग पधार गये। उस समय श्रीनवनीतप्रियजी श्रीगोकुल में विराजते थे। उनको पधारने के लिये मनुष्यों को भेजा और आज्ञा की कि ''श्रीदाऊजी महाराज को तथा बहू–बेटियों को पधराकर आगरे ले आओ और मुखिया भीतरिया

विट्ठल दुबेजी से कह आना कि तुम श्रीनवनीतप्रियजी को पधराकर आगरे ले आना।'' पीछे विट्ठल दुबेजी के स्नान करके शंखनाद किये और श्रीनवनीतप्रियजी को जगाये उस समय रात्रि एक प्रहर बीत चुकी थी। श्रीनवनीतप्रियजी निद्रा में थे। उस समय श्रीनवनीतप्रियजी से बहुत विज्ञप्ति की परंतु जगे नहीं, तब हाथ से पकड़कर पधराने लगे तब भी श्रीनवनीतप्रियजी उठें नहीं तब दुबेजी ने जाना की आपकी इच्छा उठने की नहीं है अब तो प्रातःकाल ही सब होगा। ऐसा कहकर रात्रि में चौक में ही सो रहे। जब चार घड़ी रात रही तब शुद्ध स्नान कर अपरस में कुछ सामग्री सिद्ध की उसके पीछे श्रीनवनीतप्रियजी को जगाये तब जगे। कुछ मंगल भोग धरके फिर शृंगार भोग धरे म्याने में पधराये तब दो चार भीतरिया और जलघरिया साथ थे। उन्होंने तथा दूबेजी ने म्याना उठाया और आगरे पधराये। मार्ग में एक प्रहर दिन चढ़ गया था, तब गोघाट पहुँचे। फिर श्रीगुसांईजी के तृतीय पुत्र श्रीबालकृष्ण जी तथा उनके नाती श्रीव्रजरायजी उनको श्रीनवनीतप्रियजी के सामने वरदान हो चुका था कि ''एक दिन राजभोग मैं तेरे हाथ से अरोगूंगा'' इसका प्रकार बताते हैं। श्रीगुसांईजी के समय में यह रीत थी कि जब श्रीनवनीतप्रियजी पौढ़ जाय तब सब गोस्वामी तथा भीतरिया बाहर आ जाय उसके पीछे सातों बालकों के घर की बहू बेटी चरण स्पर्श करें। श्रीबालकृष्णजी पुत्र श्रीपीताम्बरजी की बहूजी ने सबके बाद में चरण स्पर्श किये तब श्रीनवनीतप्रियजी ने आज्ञा दी कि ''मैं तेरे घर चलूंगा तब चोली में दुबका कर श्रीनवनीतप्रियजी को अपने घर पधराकर ले गयी। चार प्रहर रात्रि उनके घर विराजे जब शेष रात्रि रही तब श्रीनवनीतप्रियजी ने आज्ञा की कि अब मुझे श्रीगुसांईजी के घर में पधरा आओ जो श्रीगिरधारीजी मुझे मंदिर में नहीं देखेंगे तो खेद करेंगे। इधर श्रीगिरिधारी जी तथा गोकुलनाथजी श्रीनवनीतप्रियजी को जगाने के लिये शैय्या पर श्री नवनीतप्रियजी को न देखकर दोनों भाई आपस में कहने लगें यह क्या है। तब श्रीगिरिधारीजी महाराज ने आज्ञा की कि कुछ कारण है। श्रीगुसांईजी ने श्रीनवनीतप्रियजी को हमारे लिये पधराये है। वे कही पधारने के नहीं हैं ऐसा कहकर अपनी डोल तिबारी में विराज गये। श्रीगुसांईजी का ध्यान हृदय में करने लगे। अब यहाँ श्रीनवनीतप्रियजी ने बहूजी को पुनः आज्ञा की हमको शीघ्र ले चलो। तब श्रीबहूजी ने श्रीनवनीतप्रियजी से विनती की कि महाराज हमारे घर राजभोग अरोगकर पधारो तब श्रीनवनीतप्रियजी ने मना किया और आज्ञा की कि किसी समय भाजड़ में तुम्हारे लालजी श्रीब्रजरायजी के हाथ का राजभोग एक दिन अरोगूंगा। अब मुझे शैय्या पर पधराकर चली आ। तुझे कोई नहीं देखेगा।'' तब बहूजी ने वैसा ही किया मंदिर में जाकर शैय्या पर श्रीनवनीतप्रियजी को पधराकर आप अपने घर चली गयी। उसके अनन्तर श्रीगिरिधारीजी मंदिर में जाकर श्रीनवनीतप्रियजी को जगाये और मंगलभोग धरा।

उस वरदान की याद व्रजरायजी को थी। जब आगरे में श्रीनवनीत प्रियजी को पधरा रहे थे

और मध्य में गऊघाट के ऊपर रसोई राजभोग सिद्ध कर रक्खा था और व्रजरायजी मार्ग के बीच में खड़े हो गये। श्रीनवनीत प्रियजी का म्याना जब देखा तब विठ्ठलदुबेजी से कहाँ श्रीनवनीतप्रियजी भूखे हैं। राजभोग मैनें कर रक्खा है इसलिये अब तो श्रीनवनीतप्रियजी राजभोग अरोग के ही पधारेंगे। उस स्थल पर श्रीनवनीतप्रियजी को पधरा लाये और वहाँ राजभोग लाकर रक्खा श्रीनवनीतप्रियजी ने अच्छे प्रकार भोग अरोगा। राजभोग सराने का जब समय हुआ तब श्री व्रजरायजी ने कहाँ मैं यमुनाजी पर सन्ध्यावन्दन करके आता हूँ। दुबेजी तुम श्रीनवनीतप्रियजी के पास सावधान रहना। ऐसे कहकर श्रीव्रजरायजी ने श्रीयमुनाजी पर अपने मनुष्यों को लेकर पधारे तब दुबेजी ने श्रीनवनीतप्रियजी को बीड़ा अरोगा कर आचमन कराया और श्रीनवनीतप्रियजी को म्याने में पधराये और शीघ्र ही सवारी आगरे को चली। एक प्रहर रात्रि बीतने पर श्रीनाथजी जिस हवेली में विराज रहे थे वहाँ जा पहुँचे। सो श्रीगोविन्दजी, श्रीबालकृष्णजी, श्रीवल्लभजी, श्रीदाऊजी और समस्त बहू बेटियों का चित्त जो खिन्न हो रहा था वह श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करके बहुत प्रसन्न हो गया। श्रीनवनीतप्रियजी के उत्थापनभोग और शयनभोग करके शैय्या पर पौढ़ाये। उसके बाद श्रीगोविन्दजी ने दुबेजी को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम सर्वस्व श्रीनवनीतप्रियजी को पधरा लाये इससे तुम कुछ वरदान मांगो। तब दुबेजी ने विनती की कि "हमारे वंश में श्रीनाथजी और श्रीनवनीतप्रियजी की सेवा नहीं छूटे" आपने आज्ञा की ऐसा ही होगा। हमारे वंश का जो होगा वह तुम्हारे वंश को पीठ नहीं देगा।

८०. श्रीगोविन्दजी ने देशाधिपति के हलकारे को आज्ञा दी और अन्नकूट का उत्सव आगरे में अरोग कर आगे पधारे

श्रीगोविन्दजी ने देशाधिपति के हलकारे को आज्ञा दी कि "हम जब तक अन्नकूट का उत्सव करें तब तक तुम बादशाह को खबर मत देना" वे सब हलकारे आपके सेवक थे इसलिये जहाँ तक अन्नकूट का उत्सव हुआ तब तक खबर नहीं दी पीछे गुप्त अन्नकूट हुआ। भातकी जगह खील करके धरी और समयानुसार यत्किंचत् पक्वान तथा सामग्री सब हुई गुप्त श्रीगोवर्द्धन पूजा की। इस प्रकार विधिपूर्वक अन्नकूट हुआ।

८१. श्रीनाथजी को दण्डोती घाट पर पधराना

अन्नकूट होने के पीछे श्रीनाथजी ने गंगाबाई को आज्ञा दी "अब हम दण्डोती घाट चलेंगे। इसलिये शीघ्र तैयारी करना" तब गंगाबाई ने श्रीगोविन्दजी महाराज से कहा कि श्रीजी को रथ में

पधराओ, तब श्रीगोविन्दजी ने श्रीनाथजी को रथ में पधराये और दण्डोती घाट को चले। राजभोग आरती करके विजय की तब दरवाजे के ऊपर म्लेच्छ द्वारपाल बैठे थे। उनने कुछ देखा नहीं अंधे हो गये मार्ग में छः घड़ी दिन रहा तब वहाँ विश्राम किया। वहाँ उत्थापन से लगाकर शयन पर्यन्त की सेवा की। श्रीजी सुख से पौढ़े।

८२. हलकारे ने श्रीजी के आगरे पधारने आदि की सूचना दी

श्रीजी के पधार जाने के बाद हलकारे ने बादशाह को खबर दी "हुजूर गिरिराज से जो देव उठे थे वे रात्रि को एक हवेली में ठहरे थे और सवेरे कहाँ गये इसका पता नहीं" यह सुनकर बादशाह ने कहा उस हवेली में है यह पता तुम्हें कैसे लगा। तब उस हलकारे ने कहा हुजूर! उस हवेली के पास पत्तल दोने बहुत से बिखरे पड़े हैं और नारदे में पानी भी बहुत बह रहा है। गोकुलिया के बिना इतना पानी और पत्तल दोने का खर्च और में नहीं होता है। यह सुनकर बादशाह मन में हँसा और हलकारे से कहाँ उन्हें आगरे में आये तो बहुत दिन हो गये मुझे सब पता था। परंतु मैं क्या उनका दुश्मन हूँ। मुझे तो जैसा हुक्म किया था मैनें कर दिया। अब उनकी इच्छा हो वहाँ मौज करे तू किसी के सामने कहना नहीं मुल्ला सुनेगा तो पीछा करेगा।

८३. मुल्ला बहुत से म्लेच्छों को साथ लेकर श्रीजी के पीछे गया

पहले तो बादशाह देवताओं से करामात मांगता। वह जब न मिलती तब मुल्ला जाकर उस देवता की मूर्ति को तोड़ देता। पाँच सौ म्लेच्छ उसके साथ रहते थे। उसने जब यह बात सुनी कि गिरिराज के देव दण्डोती घाट पर आये है तब वह बहतु से म्लेच्छ साथ लेकर श्रीजी के पीछे गया। बादशाह ने उसे मना कर दिया था। फकीर साहब तुम मत जाओ। वह देव करामाती है वे देव अपनी ही इच्छा से उठे हैं। उनको मैनें नहीं उठाया है। यह सुनकर भी उस म्लेच्छ ने बादशाह की कही बात नहीं मानी। जब वह तुर्क गया उस दिन श्रीजी का रथ चम्बल के पार उतरा था और एक प्रहर रात्रि तक वहाँ ही रहा। तब श्रीगोविन्दजी की प्रेरणा से गंगाबाई ने श्रीजी से पूछा बाबा क्या इच्छा है। तब श्रीजी ने कहा उत्थापन करो आज हम चम्बल के तीर पर रहेंगे। इतने ही में वह तुर्क चम्बल के पहिले तीर पर आकर खड़ा हो गया। श्रीगोविन्दजी तो उत्थापन की तैयारी करा रहे थे। सेना को देख चित्त में उद्वेग हुआ तब गंगाबाई से कहा कि श्रीनाथजी से पूछो कि उस पार म्लेच्छ आये हैं। उत्थापन के लिये क्या आज्ञा हैं तब गंगाबाई ने श्रीनाथजी से पूछा। तब श्रीनाथजी ने कहा उत्थापन शीघ्र करो। तुमको म्लेच्छ से क्या लेना देना उससे हम समझ लेंगे। तब शंखनाद हुए सब निःशंक होकर सेवा करने लगे। यवन उस पार खड़े थे उनने श्रीगोवर्द्धननाथजी के रथ को देखा तो बड़े पर्वत के समान दिखाई दिया और श्रीनाथजी के साथ जो मनुष्य थे वे बड़े–बड़े सिंह के समान देखे

मनुष्याकृति किसी को भी दिखाई नहीं दी। तब सिंहादिक को देखकर म्लेच्छ आपस में बात करने लगे। ये तो सब सिंह ही दिखाई देते हैं इनमें आदमी तो कोई नजर नहीं आता। व्रजवासी जो आपस में बातचीत कर रहे थे वह उनको शेर की गर्जना के समान सुनाई दी। तब आपस में कहने लगे "इस जगह से जल्दी भागो नहीं तो यह सिंह हुंकारते हैं सो अपने को खाने के लिये आयेंगे।" इतने में जलघरिया चम्बल नदी पर जल भरने आये तथा पात्र मांजने वाले पात्र मांजने के लिये वहाँ आये उनको देखकर म्लेच्छों ने कहा कि ये सिंह अपने खाने के लिये आ रहे हैं इसलिये यहाँ से जल्दी चलो नहीं तो ये सबको खा जायेंगे। ऐसा कहकर वहाँ से भागे तब भय के मारे किसी के वस्त्र गिर पड़े और कोई किसी के ऊपर जा गिरा। इस तरह गिरते पड़ते जैसे–तैसे एक ही रात्रि में आगरे पहुंचे। तब उस मुल्ला ने कहा वह देव तो बड़ा करामाती है। हम अपनी जान बचाकर बड़ी कठिनाई से भागकर आये हैं आज पीछे उस देव का नाम नहीं लूंगा। तब बादशाह ने कहा कि मैनें तो तुझको पहले ही मना किया था कि वह देव बड़ा करामाती है। तुम उस पर चढ़ कर क्यों गये।

८४. कृष्णपुर पधराने के लिये गंगाबाई के प्रति श्रीनाथजी की आज्ञा

दूसरे दिन श्रीनाथजी ने गंगाबाई को आज्ञा की कि श्रीगोविन्दजी से कहो कि मुझे पुनः चम्बल उतरकर दण्डोती घाट ऊपर ले चलो। कृष्णपुर गाँव है वहाँ मैं विराजूंगा।

८५. श्रीगुसांईजी ने बालकृष्णजी को वरदान दिया था

एक समय श्रीगुसांईजी के सामने जन्माष्टमी के दिन उनके तृतीय पुत्र श्रीबालकृष्णजी ने यशोदाजी का वेश किया था। श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में नन्दमहोत्सव के दिन बहुत भाव विभोर होकर श्रीनवनीतप्रियजी को पलना झूला रहे थे और कीर्तन की यह तुक गा रहे थे। "**बहुरी लयें जननी गोद स्तन चले चुचाई। तुम व्रजरानी के लाला**" उसी समय श्रीबालकृष्णजी के स्तन में से दूध की धारा बह चली और श्रीनवनीतप्रियजी को पलना में से गोद में ले लिया। तब श्रीगुसांईजी ने हाथ पकड़कर श्रीनवनीतप्रियजी को पीछे पलने पर पधराया और यह जाना कि इनमें भाव की वृद्धि बहुत हो गई है इनमें श्रीमातृचरण का आवेश हो गया है इससे श्रीगुसांईजी बहुत प्रसन्न हुए और कहा तुम वरदान मांगो तब श्रीबालकृष्णजी ने वरदान मांगा "**मुझे प्रति जन्माष्टमी को ऐसा ही आवेश रहे और कुछ दिन श्रीनाथजी की सेवा की प्रार्थना की**" तब श्रीगुसांईजी ने आज्ञा की कि "प्रति जन्माष्टमी के दिन तुम्हारे में ऐसा ही आवेश रहेगा। श्रीनाथजी की सेवा में तो श्रीगिरिधरजी का अधिकार रहेगा क्योंकि श्रीनाथजी ने श्रीगिरिधरजी का हाथ पकड़ा है। आगे किसी समय श्रीनाथजी जब देशान्तर से पधारेंगे तब तुम्हारे नाती श्रीव्रजरायजी सत्ताईस दिन श्रीनाथजी की सेवा करेंगे पीछे अट्ठाईसवें दिन श्रीगिरिधरजी के वंश में श्रीगोविन्दजी

होंगे पीछे छीन लेंगे'' यह वरदान श्रीगुसांईजी ने श्रीबालकृष्णजी को दिया था।

८६. श्रीगुसांईजी के वरदान के अनुसार व्रजरायजी ने श्रीजी की सेवा सत्ताईस दिन की

उन श्रीबालकृष्णजी के पुत्र श्री पीताम्बरजी हुए उनके श्रीश्यामलालजी और श्रीव्रजरायजी हुए। वे श्री व्रजरायजी बादशाह के साथ बहुत रहते थे। एक दिन बादशाह प्रसन्न हुआ और कहा ''जो व्रजराय तू कुछ मांग तेने मेरी खिदमत बहुत की है तुझे मेरे पास रहते चार बरस हुए'' तब व्रजरायजी ने कहा ''श्रीगिरिराज से जो देव उठे हैं उनकी सेवा मैं करूं'' तब बादशाह ने मना किया जो हमेशा से चले आ रहे हैं वे ही करेंगे। तुमने मुझे बहुत रिझाया है इसलिये तेरा वचन खाली नहीं जाना चाहिये। अतः तुम जाप्ता संग लेकर जाओ और जहाँ वे हों वहाँ जाकर एक महीना रहना उसके आगे नहीं रह सकोगे। तब बादशाह का जाप्ता साथ में लेकर श्रीव्रजरायजी दण्डोती घाट पर आये तब कृष्णपुरी में श्रीनाथजी विराजे रहे थे वहाँ वे आये।

८७. व्रजरायजी को आया जानकर श्रीजी ने गंगाबाई को आज्ञा दी

श्रीव्रजरायजी को आया जानकर श्रीनाथजी ने गंगाबाई को आज्ञा दी ''तुम श्रीगोविन्दजी से कहो तुम सकुटुम्ब तथा हमारे परिवार के सब मनुष्यों को लेकर यहाँ से दस कोस का एक गाँव है वहाँ एक बड़ा घर है वहाँ जाकर तुम सबके साथ रहना। यहाँ श्रीव्रजरायजी आये हैं इनको बादशाह का हुक्म है इससे वे सत्ताईस दिन सेवा करेंगे प्राचीनकाल में श्रीगुसांईजी ने वरदान दिया था। अट्ठाईसवें दिन आकर तुम श्रीव्रजरायजी को निकाल देना और मेरी सेवा करना।''

८८. श्रीजी की आज्ञा को गंगाबाई ने श्रीगोविन्द से कही

यह बात गंगाबाई ने श्रीगोविन्दजी से कही जो देवदमन कर्तुं अकुर्तं अन्यथा कर्तुं समर्थ है। इसलिये इनकी इच्छा हो वैसा अपने को करना चाहिये। पूर्व में श्रीगुसांईजी ने भी आषाढ़ मास में विप्रयोग का अनुभव किया था। इसलिये अपने को भी सत्ताईस दिन का वियोग दिया है इससे अपने को श्रीनाथजी की आज्ञा पालन करना चाहिये।

८९. श्रीगोविन्दजी को सत्ताईस दिन का विप्रयोग हुआ उसका वृत्तांत

यह बात सुनकर श्रीगोविन्दजी ने विचार किया जो श्रीआचार्यजी का यह वाक्य–

विवेकस्तु हरिः सर्वं निजेच्छातः करिष्यति।

प्रार्थिते वा ततः किं स्यात् स्वाम्यभिप्रायसंशयात्।।

अब श्रीनाथजी से प्रार्थना नहीं करनी चाहिए। श्रीव्रजरायजी का सामर्थ्य ही क्या है जो हमारे सामने आकर श्रीजी की सेवा करे। परन्तु श्रीगुसांईजी का प्राचीन वरदान है इससे सत्ताईस दिन सेवा करेंगे। अट्ठाईसवें दिन आकर श्रीव्रजरायजी को निकालेंगे और हम सेवा करेंगे। श्रीगोविन्दजी अपने कुटुम्ब और सब मनुष्यों को साथ लेकर एक घर में जाकर रहने लगे। वहाँ गंगाबाई को श्रीजी नित्य दर्शन देते। व्रजभक्तों ने अन्तर्ध्यान लीला में जैसे वनकी वल्लरियों से पूछा था वैसे ही श्रीगोविन्दजी ने श्रीनाथजी को गाँव–गाँव में पूछा। एक दो जलघरियों तथा पात्र मांजने वाले जो श्रीजी के संग ही रहे और परिकर तो श्रीगोविन्दजी के साथ ही था। श्रीव्रजरायजी ने जब तक सेवा की तब तक श्रीगोविन्दजी ने फलाहार ही लिया अन्न त्याग दिया। जब प्रातःकाल होता तब आप योगी का वेश धारण कर मृगछाला बाघाम्बर ओढकर अवधूत का वेश बना शरीर में भस्म लगाली साथ में एक रोड़ा दरजी जो श्रीनाथजी का था वह सारंगी अच्छी बजाता था। उसको चेला बना लिया इस तरह अवधूत का वेश बनाकर चेले से सारंगी बजवाते और सब मिलकर गाते राग आसावरी–

बसे वनमाली आली किस विध पाइये।

ऐसी जिय आवे जैसे जोगी ह्वे के जाइये।

इस पद को दोनों मिलकर गाते। इस तरह जानते हुए भी अनजान बनकर घर–घर में पूछते फिर और कहते हमारा एक बालक खो गया है उसे तुमने कहीं देखा है यदि देखा है तो बताओ। इस तरह विरह विकल दशा में श्रीगोविन्दजी श्रीनाथजी को सत्ताईस दिन तक ढूंढ़ते फिरे परन्तु इस भेद को किसी ने जाना नहीं।

१०. अट्ठाईसवें दिन श्रीगोविन्दजी ने व्रजरायजी को निकाल दिया

जब अट्ठाईसवां दिन आया तब श्रीगोविन्दजी और रोडा दरजी दोनों कृष्णपुर के तालाब के ऊपर जाकर बैठे उस समय श्रीजी के राजभोग आये थे इसलिये दोनों जलघरिया सखडी के हांडा मांजने के लिये तालाब पर आये थे। उन्होंने श्रीगोविन्दजी को देखा परंतु योगी का वेश होने से पहचाना नहीं पात्र मांजने लगे। उतने में एक व्रजवासी ने दूसरे व्रजवासी से कहा "सुन भइया श्रीविट्ठलरायजी के वंश में कोई ऐसा मर्द नहीं जो इस श्रीव्रजराय को निकालकर अपना घर संभाले। श्रीविट्ठलरायजी के चार पुत्र हुए उनमें श्रीगिरिधरजी तो बहुत मर्द थे और श्रीगोविन्दजी भी बड़े मर्द

है पर इस समय न जाने कहाँ गये हैं नहीं तो इस समय यदि आ जाय तो श्रीव्रजरायजी के पास फौज तो है नहीं जो लड़ेगी उसे हाथ पकड़कर निकाल सकते हैं।" इस बात को सुनकर श्रीगोविन्दजी जलधरिया के पास गये और उससे पूछा हमको तू बता श्रीनाथजी कहाँ विराज रहे हैं मेरा ही नाम श्रीगोविन्दजी है। ऐसा कहकर अपने योगी के वेश को हटाकर धोती उपरना धारण किया और अपरस में एक कटार को कमर के उपरने में छिपाकर उस जलघरिया को साथ में लिया उसके पीछे–पीछे गये उस समय माला बोली थी श्रीव्रजरायजी ने झारी भरकर आचमन कराया सब सेवा कर चुके जिस समय आरती सिद्ध करने के लिये उद्यत हुए इतने में अकस्मात् श्री गोविन्दजी ने आकर एक हाथ से कमर में से कटार को निकालकर श्रीव्रजरायजी को दिखाई और यह कहा कि हमारे और तुम्हारी दोनों की यादवस्थली श्रीनाथजी के सम्मुख ही होगी तब तीसरा कोई आरती करेगा। तुमने बहुत दिन आरती की अब तुम यहाँ से प्राण बचाकर निकल जाओ नहीं तो कटारी से तुम्हारा पेट चीर दूंगा और पीछे अपने पेट में मारूंगा। तुम्हें सेवा करने नहीं दूंगा। सेवा तो श्रीदाऊजी करेंगे। श्रीगोविन्दजी बड़े प्रबल थे उन्होंने श्रीव्रजरायजी को ऐसी दक्षिणा दी। तब श्रीव्रजरायजी तो भयभीत हो गये थर–थर कांपने लगे और हाथ जोड़ लिये आंखों में आंसू आ गये और प्रार्थना करने लगे। मुझे मारें नहीं मैं इसी समय निकल जाता हूँ। तुम श्रीनाथजी को सम्हाल लो ऐसा कहकर श्रीव्रजरायजी वहाँ से चले गये। आगरे में जाकर बादशाह से मिले सब बात कही तब बादशाह ने कहा अब कभी तुम मत जाना। श्रीगोविन्दजी ने अपना कुटुम्ब श्रीदाऊजी तथा बहू बेटी सब परिवार को बुला लिया जब सबने श्रीनाथजी के चरण स्पर्श किये तो सब बड़े प्रसन्न हुए और श्रीनाथजी ने भी अपने परिकर को जब देखा तो बहुत प्रसन्न हुए। व्रजरायजी ने सेवा की परंतु श्रीनाथजी ने सुख नहीं माना। श्रीगोविन्दजी, श्रीबालकृष्णजी, श्रीवल्लभजी तथा श्रीदाऊजी इन सबने मिलकर श्रृंगार किया उस दिन श्रीनाथजी ने बहुत अलौकिक दर्शन दिये।

१९. श्रीनाथजी मेवाड़ तक प्रवास कैसे पधारे उसका वर्णन

इस प्रकार श्रीनाथजी ने प्रथम चतुर्मास दण्डोती घाट पर किया। बड़े–बड़े घरों को देखकर श्रीजी बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि यह देश बहुत अच्छा है। पर अब यहाँ से चलो ऐसी गंगाबाई को आज्ञा दी। तब रथ में विराज के वहाँ से चले। श्रीगोविन्दजी आदि तीन भाइयों में से एक भाई तो डेरा लेकर आगे चलते और डेरा खड़े करते। रसोइया, बालभोगिया और जलघरिया को साथ ले जाकर उत्थापन की तैयारी रखते। श्रीनाथजी राजभोग आरती करके चलते सो जब छः घडी दिन शेष रहता तब डेरे में पधार जाते। वहाँ सब तैयारी पहले से ही रहती थी तब श्रीजी के उत्थापन भोग संध्या आरती और शयन हो जाय तब तुरन्त श्रीजी पोढ जायं और सवेरे शीघ्र ही मंगला, श्रृंगार,

ग्वाल और राजभोग पर्यन्त की सेवा करके सब परिवार महाप्रसाद लेकर दूसरे दिन दूसरे विश्राम स्थान पर चलते एक भाई श्रीवल्लभजी डेरा के साथ चलते और दो भाई श्रीजी के साथ चलते। श्रीगोविन्दजी तो श्रीजी के रथ के साथ घोड़े पर चढ़कर चलते श्रीबालकृष्णजी रथ के पीछे घोड़े पर चढ़कर चलते पाँच हथियार बांध कवच पहनकर अलमस्तरूप से चलते मार्ग में कोई राजा प्रजा दर्शन के लिये विनय करते उनको श्रीगोविन्दजी आज्ञा करते कि श्रीनाथजी तो श्रीगिरिराज की कन्दरा में विराजते हैं रथ में तो हमारी वस्तुएँ हैं किसी को दर्शन नहीं कराते। संवत् १७२६ आश्विन सुदि १५ पूर्णमासी शुक्रवार अश्विनी नक्षत्र के दिन श्रीनाथजी श्रीगिरिराज से उठे और संवत् १७२८ फाल्गुन वदि ७ शनैश्चरवार स्वाति नक्षत्र में सिंहाड में पहुँचकर पाट बैठे उसके बीच में ढाई वर्ष पर्यन्त मार्ग में रथ में ही बिराजे रहे। उतने समय तक रसोई की सेवा सामग्री तथा शाक की सेवा श्रीवल्लभजी ने अपने हाथ से की। मेदा पीसने की सेवा श्रीवल्लभजी महाराज ने की। अनसखडी व बालभोग तथा दूध घर की सेवा श्रीबालकृष्णजी तथा सब बहू बेटियां मिल कर करते थे। साथ में सौ गायें रहती इसलिये दूध, दही और माखन सब साथ ही में रहता।

१२. दण्डोती घाट से श्रीनाथजी कोटा तथा बूंदी पधारे

दण्डोती घाट से श्रीगोवर्द्धननाथजी कोटा बूंदी पधारे। वहाँ अनिरुद्धसिंहजी हाडा बूंदी के राजा थे। दर्शन के लिये आये उनको वैष्णव जानकर श्रीगोविन्दजी महाराज ने श्रीजी के दर्शन करवाये। तब उस राजा ने विनय की कि श्रीनाथजी से प्रार्थना करिये कि मेरे देश में विराजें। कोटा और बूंदी में अच्छी जगह है। हम पाँच हजार हाडाओं की पाँच हजार तलवार है म्लेच्छ आदि आयेगा तो हम लडेंगे। तब श्रीगोविन्द ने आज्ञा की कि आपकी इस प्रकार की वैष्णवता है तो यहाँ अच्छी जगह देखकर कुछ दिन विराजेंगे। पीछे जहाँ इच्छा होगी वहाँ पधारेंगे। सदा विराजने का तो यहाँ नहीं हो सकता क्योंकि तुम्हारी सेना बहुत थोड़ी है तब कृष्णविलास करके कोटा के प्रदेश में जहाँ पद्मशिला है वहाँ चातुर्मास्य पर्यन्त विराजे।

१३. श्रीनाथजी जोधपुर पधारने के लिये कोटा बूंदी से पुष्करजी पधारे

चातुर्मास्य बीत जाने के अनन्तर श्रीजी पुष्करजी होकर जोधपुर पधारे। मार्ग में जब पुष्करजी के पास होकर रथ निकला वहाँ अटक गया। तब श्रीगोविन्दजी ने गंगाबाई से कहा तुम श्रीजी से पूछो रथ क्यों अटका है आपकी क्या इच्छा है तब गंगाबाई ने अंदर जाकर श्रीनाथजी से पूछा रथ क्यों अटका रक्खा है। तब श्रीजी ने आज्ञा की यहाँ निकट में ही कोई सरोवर है उसमें कमल फूले हुए हैं उसकी सुगंध मुझे आ रही है। इसलिये शीघ्र जाकर वहाँ से कमल ले आओ। मेरे रथ में धरो

तब उन कमलों की सुगंध लेकर आगे चलूंगा। जहाँ मेरी इच्छा होगी वहाँ पधारूंगा। तब दो चार व्रजवासी वहाँ गये सो पुष्करजी आये। वहाँ आकर फूले हुए अनेक कमलों में से आरक्त तथा श्वेत एवं अन्य भी प्रफुल्लित कमलों को लेकर पत्र में रखकर शीघ्र ही श्रीगोवर्द्धननाथजी के रथ के पास आकर खड़े हुए। तब उन कमलों को श्रीगोविन्दजी महाराज ने श्रीनाथजी को अंगीकार करवाये। श्रीजी की आज्ञा से वे कमल आये थे इसलिये श्रीजी को वे कमल अत्यन्त प्रिय हैं ऐसा जानकर श्रीबालकृष्णजी और श्रीवल्लभजी ने भी श्रीजी को कमल अंगीकार कराये। उस समय दाऊजी महाराज तो बालक थे। श्रीगोविन्द महाराज ने उनको भी बुलाया और उनके द्वारा भी कमल अंगीकार कराये और बहूजी तथा बेटीजी आदि जो भी गोस्वामी थे उन सबके कमल श्रीनाथजी को अंगीकार कराये।

१४. श्रीनाथजी जोधपुर पधारने के लिये पुष्करजी से कृष्णगढ़ पधारे

कृष्णगढ़ के राजा रूपसिंह जी अच्छे भगवदीय थे वे दीक्षित अर्थात् श्रीविट्ठलेश्वरजी दीक्षित के सेवक थे। उन्होंने देशाधिपति की सेना में रहकर युद्ध किया और मारे गये। उस समय उनके पास एक धुक धुकी थी जिसमें हीरे जड़े हुए थे। उसको उन्होंने अपने पास रहने वाले एक नाई को दी और कहा कि श्रीगिरिराज पर श्रीनाथजी विराजते हैं उनको भेंटकर आना तब उसने उस धुक धुकी को ले जाकर श्रीगिरिराज पर श्रीनाथजी विराजते थे उन्हें भेंट कर दी। राजभोग आरती के दर्शन करके वह नीचे उतरा तो उसने दण्डोती शिला के ऊपर रूपसिंहजी का स्वरूप देखा पीला केसरिया उपरना ओढ़े हुए हैं तथा तिलक मुद्रा आदि दिये हुए हैं एवं भगवत्तेज से युक्त उनका स्वरूप है। लौकिक शरीर तो उनका रण में छूट गया था। अलौकिक शरीर को धारण कर वे मंदिर में पधारे थे। उनको मंदिर में प्रवेश करते हुए तो सबने देखा परंतु निकलते हुए किसी ने नहीं देखा। तब सबने कहा कि राजा रूपसिंहजी ने श्रीजी की लीला में प्रवेश किया। उन्हें राजा रूपसिंहजी के पुत्र मानसिंहजी कृष्णगढ़ के राजा थे उस समय श्रीजी रथ में विराज के कृष्णगढ़ पधारे। जब मानसिंह ने सुना कि व्रज के श्रीनाथजी मेरे देश में पधारे हैं वे हमारे इष्टदेव हैं उनके दर्शन किये बिना मुझे जलपान करना भी उचित नहीं है। तब वे श्रीजी के दर्शन के लिये भयंकर वन में जहाँ ढाक का वन था जहाँ अजमति नाम का एक उजाड़ गाँव था बहुत सुंदर एक सरोवर भी था और नदी पर्वत तथा पर्वत के झरने भी बहुत थे वहाँ श्रीजी का रथ खड़ा रहा वहाँ ही आकर मानसिंहजी ने श्रीजी के दर्शन किये वैष्णव जानकर श्रीगोविन्दजी ने दर्शन करवाये। तब उनने विनती की कि महाराज प्रकट रूप में तो म्लेच्छ जानेगा गुप्त रूप में आप मेरे देश में विराजे तो मैं सेवा में तत्पर हूँ।

श्रीगोविन्द ने श्रीजी से पुछवाया तब श्रीजी ने आज्ञा की कि यह पर्वत बहुत रमणीय है ढाक के वृक्ष भी बहुत ही है और टेसू फूले हैं। इससे वसंत ऋतु यहाँ करेंगे। उसके अनन्तर आगे चलेंगे। यहाँ तो हम नहीं रहेंगे। दोलोत्सव वहाँ ही किया और वसंत ऋतु तथा ग्रीष्म ऋतु के कुछ दिन वहाँ विराजे पीछे आगे मारवाड़ पधारे।

९५. श्रीजी जब मारवाड़ पधारे उस समय मार्ग में वीसलपुर के वैरागी को दर्शन दिये

जोधपुर से पूर्व व्रज के मार्ग में वीसलपुर गाँव था। वहाँ एक वैरागी अपने शिष्य के साथ रहता था। जिस समय श्रीनाथजी श्रीगिरिराज ऊपर विराजते थे उस समय दोनों गुरु शिष्य गंगा स्नान करने गये थे। गंगा स्नान करके गिरिराज आये। तब गुरु ने जाकर श्रीजी के दर्शन किये और शिष्य ने भागवत पाठ किया उस समय जब उसने यह श्लोक पढ़ा–

कृष्णस्त्वन्यतमं रूपं गोपविश्रम्भणं गतः।

शैलोऽस्मीति ब्रुवन् भूरि बलिमादद् बृहद्वपुः।।

भागवत स्कंध १० अध्याय २४ श्लोक ३५

इसे पढ़कर मन में विचार किया कि श्रीभागवत में श्रीगिरिराज को भी भगवद्रूप कहा है उसके ऊपर मैं पैर कैसे रक्खूं जब गुरु दर्शन करके आये तब उसने श्रीजी के दर्शन की बहुत बडाई की और कहा कि श्रीनाथजी बहुत ही सुंदर है। तब वह शिष्य दर्शन करने को गया। परंतु श्रीगिरिराज तक जाकर उस पर चढ़ा नहीं चढ़ने में पर्वत के ऊपर पैर रखने के उसके चित्त में दुःख हुआ और श्रीजी के दर्शन की भी मन में इच्छा थी। जब तीन दिन तक मन में यह होता रहा कि क्या करूं। इस विचार से वे दोनों गुरू शिष्य गिरिराज के वहाँ ही रहे और गिरिराज की परिक्रमा की। शिष्य को श्रीनाथजी के दर्शन न होने से चित्त में बहुत खेद बना रहा। कुछ समय के बाद गुरुजी तो हरिशरण हो गए तब वह शिष्य वीसलपुर महन्त बना और उस वीसलपुर में ही रहता था। तब श्रीजी ने उसे स्वप्न दिया कि जिनके दर्शन के लिये तू खेद करता है वह ठाकुर मैं ही हूँ और कल तेरे गाँव के निकट होकर मेरा रथ निकलेगा, तब तू आकर रथ को पकड़ लेना और श्रीगुसांईजी से विनती करना कि "मुझे दर्शन कराओ" यदि तुझे गुसांईजी दर्शन की मना करे तो तू मेरा श्रृंगार बता देना। श्वेत पाग, पिछोड़ा, श्वेत श्रृंगार है और श्रीजी इस रथ में निश्चित रूप से विराजे हैं। इसलिये मुझे

अवश्य दर्शन कराओ। तब तुझे श्रीगुसांईजी दर्शन करावेंगे और एक पाटिया तू राजभोग के लिये बनवाना उस पाटिये के ऊपर नित्य राजभोग आयेगा। इस प्रकार श्रीजी ने उस वैरागी को स्वप्न में आज्ञा की। तब वह वैरागी सवेरे उठा और उठकर बढ़ई को बुला लाया और उसने कहा "मेरे पास पच्चीस भैंस हैं उसमें एक भैंस जो अच्छी हो उसे तू ले लेना परन्तु अभी का अभी एक पाटिया बनाकर ले आ। तब उस बढ़ई ने एक प्रहर में पाटिया बना तैयार करके ला दिया। उस पाटिया को ले मार्ग में आ बैठा जब दिन का पिछला प्रहर बाकी रहा तब उसे श्रीगोवर्द्धननाथजी के रथ के दर्शन हुए। वह मार्ग में रथ के आगे जाकर बैठ गया और कहने लगा– "मुझे श्रीनाथजी के दर्शन कराओगे तो मैं मार्ग से हटूंगा।" तब सबने यह जाना कि यह कोई बादशाह का मनुष्य है और कपट से पूछ रहा है। तब श्रीगोविन्दजी ने कहा "श्रीनाथजी तो सदा श्रीगोवर्द्धन की कन्दरा में विराजते हैं। इस रथ में तो हमारे काम की वस्तु है उसे हम ले जा रहे हैं" तब उस वैरागी ने कहा– "मुझे रात्रि में श्रीनाथजी ने स्वप्न में आज्ञा की– मेरे राजभोग के लिये एक पाटिया बनवाकर तू लाना सो मैं लेकर आया हूँ उसे लीजिये और मुझे श्रीनाथजी के दर्शन कराइये। श्वेत पाग और श्वेत पिछोड़ा का शृंगार है।" वैरागी की यह बात सुनकर श्रीगोविन्दजी ने जाना कि यह कोई अनुभवी वैष्णव है। इसे दर्शन करना चाहिये। तब सब से कहा कि आज उत्थापन यहाँ ही होंगे तब वहाँ डेरा करवाकर उत्थापन किये। तब उस वैरागी को दर्शन हुए। दूसरे दिन राजभोग की आरती पर्यन्त उसी गाँव में विराजे। इसके पीछे जोधपुर के लिये विजय (प्रयाण) की उस वैरोगी के पाटिया को वहाँ ही छोड़ गये और कहा कि श्रीजी के यहाँ पाटिया की क्या कमी है इस वैरागी के पाटिया की क्या पड़ी है। यदि वह मनोरथ करके बनवा लाया तो उसके ऊपर एक समय राजभोग अरोग लिया। अब इसे यहीं पटक दो वह वैरागी उठा ले जायेगा। ऐसा कहकर पाटिया को वहाँ ही पटक दिया और शीघ्र चले गये। गाँव में से आकर जब वैरागी ने उस स्थल को देखा तो श्रीजी तो पधार गये है और वह पाटिया वहाँ ही पड़ा है। तब उस वैरागी का चित्त बहुत उदास हुआ मन में कहने लगा कि श्रीनाथजी ने स्वप्न में आज्ञा की कि तू पाटिया बनवा ला फिर भी उसे अंगीकार नहीं किया इसका कारण क्या है। तब वह वैरागी पाटिया उठाकर अपने घर ले गया और उत्तम स्थल पर रख दिया मन में खेद करने लगा। जब वीसलपुर से श्रीनाथजी का रथ चला तो तीन कोस के ऊपर जाकर रूक गया वहाँ से आगे चलाने का बहुत प्रयत्न किया पर रथ वहाँ से चला ही नहीं। तब श्रीगोविन्दजी ने गंगाबाई को आज्ञा दी कि तुम श्रीनाथजी से पूछो कि इस निर्जनवन में एक–एक कोस तक कोई गाँव नहीं है जल और छाया भी नहीं है ऐसी जगह पर रथ के अटकाने का कारण क्या है। तब गंगाबाई ने श्रीनाथजी से पूछा, "बलिहार लाल यह रथ क्यों अटका है चलता क्यों नहीं है" तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की कि

"राजभोग धरने के समय पाटिया का दुःख था इसलिये मैनें उस वैरागी को स्वप्न में आज्ञा करके जो पाटिया बनवाया था उसे वहाँ ही डाल आये अब राजभोग किस पर धरोंगे। जब पाटिया आयेगा तब चलूंगा। जब तक एक स्थल में स्थिर होकर नहीं बैठूंगा तब तक इसी पाटिये के ऊपर राजभोग आवेगा।'' तब यह बात गंगाबाई ने श्रीगोविन्दजी से कही यह सुनकर श्रीगोविन्दजी ने अपने मन में बहुत ही पश्चाताप किया और तत्काल ही व्रजवासियों को घोड़े पर चढ़ाकर भेजा और कहा जो पाटिया वहाँ पड़ा हो तो शीघ्र लेकर आओ कोई उठाकर ले गया हो तो जाकर वैरागी से कहना कि "तुम्हारे बड़े भाग्य हैं जो तुम्हारे पाटिये को श्रीनाथजी ने अंगीकार किया है अब तुम एक पाटिया और बनवाकर हमको दो। और पहले का जो पाटिया तुमने उठाकर कहीं रक्खा हो तो उसे ही दे दो'' इस आज्ञा को प्राप्त कर दोनों व्रजवासी घोड़ों को दौड़ाते हुए डेढ़ घड़ी में ही उस स्थल पर पहुँच गये। वहाँ पाटिये को न देखकर वैरागी के पास जाकर सारा वृत्तांत कहा जब उस वैरागी ने वह पाटिया उन व्रजवासियों को दे दिया। उसे लेकर वे व्रजवासी तुरंत ही उतने ही समय में पीछे वहाँ आ गये और पाटिया श्रीगोविन्दजी को दे दिया। वह पाटिया श्रीनाथजी की आज्ञा से बना था इसलिए श्रीगुसांईजी के सब बालकों ने उस पाटिये के दर्शन किये और पाटिये के हाथ लगाकर सबने अपने हाथ आंखों से लगाये और उसको बहुत यत्न से रखने लगे। जिस समय श्रीजी का प्रस्थान हो उस समय याद रखकर उसको साथ लेते थे। जब तक मेवाड़ के मंदिर में स्थिर होकर नहीं विराजे तब तक उस पाटिया को रक्खा और श्रीनाथजी का राजभोग उसी पाटिये पर आता। जब वह पाटिया आया तब श्रीनाथजी का रथ वहाँ से चला।

१६. श्रीजी जोधपुर पधारे और चापासेनी में चातुर्मास किया

वहाँ से चले सो जोधपुर पधारे। जोधपुर के राजा जसवन्तसिंहजी थे जिनकी ननसार कमाऊँ के पहाड़ में थी। उस समय वे वहाँ गये थे। उनके प्रधान आदि तो जोधपुर में थे। सब श्रीनाथजी के दर्शन के लिये आये और उनने प्रार्थना की कि महाराज आप आठ दिन यहाँ विराजें तो हम राजाजी को बधाई लिखवा देंगे। तब जोधपुर से तीन कोस की दूर पर चापासेनी गाँव था वहाँ कदम्बखण्डी थी और चारों ओर गाँव था वहाँ श्रीजी चातुर्मास विराजे। श्रीजी के श्रीगिरिराजजी से उठने के अनन्तर मार्ग में तीन चातुर्मास हुए। उनमें पहला चातुर्मास तो दण्डोती घाट के कृष्णपुर में दूसरा कोटा के कृष्णविलास में और तीसरा चातुर्मास जोधपुर के चापासेनी में किया। चौथा चातुर्मास तो मेवाड़ में अपने मंदिर में किया। और संवत् १७२६ आश्विन सुदि १५ से लेकर संवत् १७२८ के फाल्गुन बदि ७ पर्यन्त श्रीजी व्रज के और मेवाड़ के बीच में भ्रमण करते रहे। उतने समय में

हिन्दूमुलतान, दण्डोतीघाट, बूंदी, कोटा का प्रदेश, ढूंढार, मारवाड़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर तथा शाहपुर इतने देशों को दो वर्ष पाँच मास और सात दिन में कृतार्थ करते हुए रथ में ही विराजे रहे।

१७. श्रीगोविन्दजी उदयपुर पधारे और राणाजी श्रीरायसिंह जी से मिलकर श्रीजी को मेवाड़ में विराजने का निश्चय किया

जब तक श्रीनाथजी चातुर्मास चापासेनी में विराजे उसी के बीच में श्रीगोविन्दजी उदयपुर पधारे और राणाजी श्रीराजसिंह जी से मिले। श्रीजी का मेवाड़ में विराजने का सब वृत्तांत कहा तब राणाजी श्रीराजसिंहजी ने अपनी वृद्धा माता से पूछा "व्रज के ठाकुर श्रीनाथजी म्लेच्छ के उपद्रव से उठे हैं वे अपने देश में विराजने की इच्छा करते हैं। यदि तुम कहो तो उन्हें पधरावें। इस बात को सुनकर म्लेच्छ यदि चढ़ आयेगा तो हमारा क्या कर्त्तव्य होगा।" तब राजमाताजी ने कहा, "सुन पुत्र पहले मीराबाई और अजबकुंवरबाई के भाग्य से श्रीजी अपने देश में पधारे हैं अपने ऐसे भाग्य कहाँ है। इससे तुम शीघ्र ही श्रीनाथजी को पधराओ विलम्ब मत करो। म्लेच्छ बादशाह यदि चढ़ आयेगा तो तुम राजपूत ही जमीन के लिये जीव देते हो तो श्रीठाकुरजी के लिये जीव देने में क्या अनुचित है।" इस बात को सुनकर राणा श्रीराजसिंहजी प्रसन्न हो गये और श्रीगोविन्दजी से विनती की कि "महाराज! श्रीनाथजी को पधराओ" तब श्रीगोविन्दजी पीछे चापासेनी गये। वहाँ जाकर श्रीनाथजी को विनती करवायी। श्रीनाथजी की आज्ञा हुई, "यहाँ चातुर्मास पूर्ण हो चुका है अब अन्नकूट करके मेवाड़ में चलूंगा।"

१८. श्रीजी के मेवाड़ में पधारने का विस्तृत वृत्तांत

कार्तिक शुल्क १५ संवत् १७२८ के दिन श्रीजी ने मेवाड़ के लिये प्रस्थान किया। मार्ग में एक गाँव आया वहाँ उत्थापन हुए और शयन पर्यन्त की सेवा हुई। उस गाँव में एक तालाब था उसमें जल बहुत पुष्कल था। श्रीजी ने उस दिन उसी तालाब का जल अरोगा। रात्रि का जब समय हुआ उस तालाब के आसपास जय-जयकार होने लगा। उस जय-जयकार शब्द को श्रीजी के संग के सब लोगों ने सुना परंतु जय-जयकार करने वाले कोई दिखाई नहीं दिये। तब सब मिलकर उस तालाब के पास गये जहाँ से जय जय शब्द की ध्वनि आ रही थी परंतु वहाँ कोई दिखाई नहीं दिया तथा उनमें से एक ने पूछा जय जय करने वाले आप कौन हैं। तब किसी ने आकाश मार्ग से उत्तर दिया। इस तालाब में हम एक लक्ष प्रेत हैं। एक हजार वर्ष से यहाँ रह रहे हैं हमारी मुक्ति नहीं होती। आज श्रीनाथजी ने इस तालाब का जल अरोगा उसके प्रभाव से हमारे लिये वैकुण्ठ से विमान आये हैं और

हमसे कह रहे हैं कि इस तालाब में तुम जितने भी पिशाच हो सब दिव्य देह धारण कर विमान में बैठकर वैकुण्ठ को चलो। वैकुण्ठनाथजी ने हमको आज्ञा दी है और हमें विमन लेकर भेजा है कि इस तालाब का जल श्रीनाथजी ने अरोगा है अतः इसमें रहने वाले एक लक्ष प्रेतों की मुक्ति हो गई हैं। उन सबको विमान में बिठाकर ले आओ। मुक्ति हो जाने से हम सब श्रीनाथजी की जय जय बोलते हुए जा रहे हैं। उसी का जय जय शब्द है। यह सुनकर श्रीगोविन्दजी तथा उनके साथ के सब लोग आश्चर्य में पड़ गये। इस प्रकार आधी रात से लगाकर सवेरे तक जय–जयकार हुआ। तदनन्तर श्रीनाथजी ने यहाँ राजभोग अरोगा और वहाँ से प्रस्थान किया। ऐसे ही अनेक गाँवों में होते हुए तेईस अथवा सत्ताईस दिन में सिंहाड में पधार गये मार्ग में जिन–जिन देशों में जहाँ–जहाँ फिरे वहाँ–वहाँ चरित्र तो आपने बहुत किये परंतु यहाँ तो मुख्य चरित्र ही लिखे हैं। सब के लिखने में ग्रंथ का विस्तार बहुत हो जाता। सिंहाड में पहुँचे तब आपका रथ एक पीपल के वृक्ष के नीचे रुक गया। श्रीजी से जब पूछा तो आपने आज्ञा दी "अजबकुंवरीबाई के रहने का स्थल यहाँ ही था। मेरा मंदिर यहाँ ही बनेगा। मैं यहाँ ही रहूँगा। राणाजी का मनोरथ तो उदयपुर में पधराने का है परंतु किसी समय उनका मनोरथ भी सिद्ध करूंगा। अभी तो अजबकुंवरीबाई के स्थल में मंदिर बनवाओ यहाँ कोई काल तक विराजूंगा। इस देश में मुझे व्रज जैसा ही लगता है। ये पर्वत मुझे बहुत सुहावने लगते हैं और सब श्रीगुसांईजी के बालक अपनी–अपनी बैठक बनवा लो" तब श्रीगोविन्द ने तत्काल मंदिर की तैयारी करवाई और गोपालदास उस्ता को आज्ञा दी "शीघ्र ही श्रीजी का मंदिर सिद्ध करो जितने भी मनुष्यों की जरूरत हो लगा दो" पत्थर तो आसपास के पहाड़ों में बहुत थे ही। चूना आदि तैयार करवाकर मंदिर की नींव लगाई। रात दिन काम चलने लगा। सहस्त्रावधि कारीगर लगाकर थोड़े ही महीने में मंदिर सिद्ध किया। तब संवत् १७२८ फाल्गुन वदि ७ शनिवार के दिन श्रीदामोदर जी महाराज (श्रीदाऊजी) ने वेदोक्त रीति से पुण्याहवाचन और वास्तु प्रतिष्ठा करवाकर श्रीनाथजी को पाट बैठाये। उसी दिन से श्रीजी आप मेवाड़ में सुख से विराजे और राज तो श्रीदामोदरजी (श्रीदाऊजी) महाराज का एवं नेग रीत तथा सब प्रणालिका पूर्व के समान ही बंध गई। गायों के लिये खिडक सिद्ध हुई उसमें गायें रहने लगी। श्रीदाऊजी महाराज श्रीजी को अच्छी तरह लाड़ लड़ाते महोत्सव सब स्वयं ही करते।

११. श्रीजी के मेवाड़ में विराजने के समाचार को सुनकर बादशाह ने महाराणा श्रीराजसिंह जी के ऊपर चढ़ाई की

चार वर्ष बीतने के पीछे म्लेच्छ के हलकारों से पूछा श्रीगिरिराज से जो देव उठे थे वे किसके

मुल्क में जाकर बसे हैं। मेरे ही अमल में है या किसी राजा के अमल में हैं। तब उन हल्कारों ने जहाँ–जहाँ मारवाड़ ढूंढार तथा मेवाड़ में विराजे थे उन सब का निश्चय कर देशाधिपति को कह कि महाराणाजी के देश में विराज रहे हैं और राणाजी हाथ जोड़कर रहते हैं। और बहुत बंदगी में रहते हैं। ऐसा सुनकर बादशाह ने कहा "मैनें तो जाना था कि मेरे ही मुल्क में रहेंगे जहाँ जायेंगे मुल्क तो मेरा ही है दरियाव के किनारे तक। परंतु वे तो मेरे मुल्क को छोड़कर राणाजी के मुल्क में जा बसे हैं। इससे मैं जाकर राणाजी को देखूंगा। ऐसा कहकर तैयारी करके मेवाड़ में आ पहुँचा तब राणाजी राजसिंहजी ने अपने कुटुम्ब को तो मेवाड़ में भेज दिया चालीस हजार सेना का नाहरे मगरे के यहाँ पडाव किया और उसी दिन बादशाह भी आ गया उसने रायसागर पर डेरा किया।

१००. जब बादशाह की सेना ने रायसागर पर और राणाजी की सेना ने नाहरे मंगरे पर पडाव किया तब श्रीनाथजी बाटरा पधारे

श्रीजी ने गंगाबाई से आज्ञा की कि "श्रीदाऊजी से कहो कि एक बाटरा गाँव है उसकी नाल में बहुत रमणीय स्थल है वहाँ अनेक प्रकार के वृक्षावलि सहज ही उत्पन्न होती है। केवडा, केतकी, चमेली और रायवेल आदि सब सहज ही होती है। वह पहाड़ मुझे देखना आवश्यक है। उस पर्वत में एक गुफा है उसमें एक ऋषिश्वर सहस्त्रावधि वर्षों से तपस्या कर रहा है उसके चित्त में यह आकांक्षा है कि श्रीकृष्ण मुझे यहाँ ही पधारकर दर्शन दें तब मैं इस देह का त्याग करूंगा। उसने प्राणों को कपाल में चढ़ा लिया है जहाँ काल की गति नहीं है। सहस्त्रावधि वर्षों से वह ऋषिश्वर बैठा हुआ है। उसको दर्शन देने के लिये मुझे उस मार्ग से ले चलो। मैं तीन दिन वहीं रहूँगा। उसके अनन्तर पुनः इसी मंदिर में आकर रहूँगा। तब तक बादशाह रायसागर पर रहेगा। पीछे मैं उसे वहाँ से उठा दूंगा। यह बात गंगाबाई ने श्रीदाऊजी महाराज से कही। श्रीदाऊजी महाराज तो बड़े प्रतापी थे उन्होंने तुरंत रथ तैयार करवाया। श्रीजी उसमें विराजे और बाटरा पधारे पहाड़ों में जहाँ विषम मार्ग था वह श्रीजी की इच्छा से सीधा हो गया और जहाँ आखडी आती वहाँ रूई के गद्दा बिछवा देते श्रीजी के रथ को जरा भी नुकसान न पहुँचें। इस प्रकार श्रीजी पर्वत पर विराजे उस पर्वत को देख बहुत प्रसन्न हुए। तीन दिन तक वहाँ विराजे। राजभोग, शंयन भोग सब वहाँ ही होते। एक दिन भोग के किंवाड खुले उस समय में गुफा में से वैरागी निकलकर दर्शन के लिए आया। उसने दर्शन कर दण्डवत् की और एक नील कमल की माला जिसे वह बनाकर लाया था वैसे कमल पृथ्वी पर नहीं होते हैं देवलोक में ही होते हैं उस योगेश्वर की गति देवलोक तक थी वहाँ से ही वह नील कमल ले आया था उनकी माला सिद्ध कर रक्खी थी और यह मन में विचार रक्खा था कि जब श्रीजी पधारेंगे तब उन्हें पहिराऊँगा। उस वैरागी को देखकर श्रीनाथजी ने अपने पास बुलाया और कहा तू स्वयं

ाला पहरा दे। तब उसने माला पहराई। एक चंदन का मूठा जो सवासेर का था वह भेंट किया वह ंदन असल मलयागिरि था। जिसको एक रत्ती तोलकर डालो तो गरम किया हुआ तेल शीतल हो जाय उस मूठे को भेंटकर दण्डवत् करके उसी पर्वत पर चला गया। भगवान् की कृपा के कारण सको विष्णु के दूत लेने को आये और विमान में बिठाकर वैकुण्ठ ले गये। तब श्रीजी ने दाऊजी से आज्ञा की कि ग्रीष्म ऋतु में चंदन की कटोरी होती है उसमें थोड़ा इस मूठे में से घिसकर डालना जब क यह मूठा रहे तब तक बराबर डालते रहना।

१०१. बादशाह का मेवाड़ से द्वारिका जाने का विस्तृत वर्णन

बादशाह ने एक रात्रि तो अपना पडाव रायसागर पर किया और दूसरा पडाव खमनोर की दी बनास पर किया। उसके बाद उसने अपने सैनिकों से कहा कि हम यहाँ एक महीने तक रहेंगे सलिये एक बाग तैयार करवाओ। वह बाग तैयार हो जायेगा तब यहाँ से चलेंगे। इसे सुनकर णाजी बहुत डरे और श्रीनाथजी की मानता की "महाराज यह म्लेच्छ हमारे देश से चला जायेगा तो ाँव भेंट करूंगा" रात्रि के समय बाटरा में श्रीजी ने गंगाबाई को आज्ञा की कि श्रीदाऊजी महाराज से कहो कि कल सिंहाड के मंदिर में जाकर उत्थापन होंगे और वह बादशाह आज खमनोर से भगेगा और रात ही रात में उदयपुर जायेगा। उस दिन रात्रि की एक प्रहर बीती थी उस समय सिंहाड में ीजी के मंदिर में जगमोहन में से बड़े-बड़े भंवर निकले उनकी संख्या कोट्यावधि थी वे सीधे खमनोर की ओर चले और बादशाह की फौज में गये। एक-एक मनुष्य, घोड़े और हाथी को क्षावधि भंवरों ने काटा तब वे सब भाग गये। उसके साथ बारह लाख फौज थी वह भंवरों के काटने े डर से पहाड़ो में बिखर गई और बादशाह की दो बेगमें थी। उनमें से एक का नाम रंगी और दूसरी का नाम चंगी था उसके साथ दस हजार घुड़सवार अलग से चलते थे वह पहाड़ में मार्ग भूल गई। राणाजी की फौज जो नाहरे मगरे में पड़ी थी उसमें चली गई। तब राणाजी श्रीराजसिंहजी को यह बात ज्ञात हुई कि बादशाह की बेगम रास्ता भूल गयी" और मेरी सेना में आ गई तब वे उसके पास गये और उससे कहा "तू मेरी बहिन है तू जहाँ चाहे वहाँ मैं तुझे साथ लेकर पहुँचा आऊँगा" तब उस बेगम ने कहा "तुम हमारे धर्म भाई हो तुम स्वयं बादशाह के पास पहुँचा आओ" तब राणाजी ने बेगम के दस गाँव कापड़े में दिये। इधर बादशाह रातों रात उदयपुर में पिछोला के ऊपर जाकर डेरा दिया ाम तो सारा ही उजाड़ था लोग तो सब भागकर पहाड़ों में चले गये थे। दुपहरी हो गई परंतु बादशाह ने खाना नहीं खाया और कहा जब मेरी बेगम रंगी-चंगी आयेगी तब खाना खाऊँगा। इतने में तो रंगी चंगी आकर खड़ी हुई। उसने बादशाह को सब समाचार कहे और कहा कि "राणाजी मुझे अच्छी तरह से पहुँचा कर गये हैं और मैनें उनको अपना धर्म का भाई बनाया है। इसलिये उनके

मुल्क में रहना ठीक नहीं'' तब बादशाह ने कहा कि ''एक मस्जिद उदयपुर में बनवाकर फि चलेंगे।'' तब बेगम ने मना किया ''कल अपने को कूंच करना है'' मैं अपने भाई राणाजी से कह दूंगी कि वे तुम्हारे नाम की एक मस्जिद बनवा रक्खेंगे। तब बेगम ने राणाजी को बुलाकर बादशाह से मिलाया तब बादशाह ने कहा तुमने हमारी बेगम की सुरक्षा की है तुम उसके धर्म के भाई हो इसलिये तुम कुछ मांगो। मैं तुम्हारे ऊपर बहुत खुश हूँ। तब राणाजी ने कहा यदि तुम खुश हो तो शीघ्र ही अपनी फौज को यहाँ से रवाना करवाओ मेरा मुल्क बिगड़ रहा है। तब बादशाह ने राणाजी से कहा तुम हमारे नाम की एक मस्जिद बनवा रखना और कन्हैयाजी श्रीगिरिराज से उठे हैं सो तुम्हारे मुल्क में आये हैं मैनें तो अपने मुल्क में विराजने के लिये बहुत कुछ किया परंतु मरजी तुम्हारे मुल्क में विराजने की है। इससे तुम उनके हुक्म में रहना। जब तक वह देवता तुम्हारे मुल्क में रहेंगे तब तक मैं मेवाड़ में नहीं आऊँगा यह कहकर कल दूसरे दिन फौज को कूंच करायी और द्वारिका की ओर गया। मेवाड़ में सब शांति हो गई। राणाजी अपने कुटुम्ब के साथ उदयपुर आ गए। जो लोग भागकर पहाड़ों में चले गये थे वे भी अपनी–अपनी जगह जाकर बस गये। उसके बाद बाटरा से राजभोग आरती करके श्रीनाथजी पधारे सो सिंहाड में अपने मंदिर में विराजे।

१०२. श्रीपुरुषोत्तमजी महाराज ने श्रीजी को जडाऊ मोजा धारण करवाये

एक समय सूरत वाले पुरूषोत्तमजी महाराज दक्षिण देश को पधारे थे। वहाँ रत्न की पुष्पलता देखकर आपने श्रीनाथजी के लिये जडाव के मोजा बनवाये और मोजा बनवाकर श्रीजीद्वार के लिये शीघ्र प्रस्थान किया परंतु मार्ग में विशेष दिन लग गये। उस समय मोजा बड़े हो चुके थे। उसके पीछे वे पधारे वर्ष पर्यन्त रहने का मौका नहीं था। काशी दिग्विजय करने के लिये पधारना था तब दाऊजी महाराज से विनती की ''मैं ये मोजा बनवा लाया हूँ और श्रीजी तो मोजा बड़े कर चुके हैं मैं आगे कार्यवश रह नहीं सकता हूँ इसलिये आपकी आज्ञा हो तो अंगीकार करेंगे'' तब श्रीदाऊजी महाराज ने आज्ञा की कि आप तो श्रीगुसांईजी के बालक हो सो आपका किया हुआ तो श्रीजी अंगीकार करेंगे। तथापि ऋतु का व्युत्क्रम है इससे श्रृंगार के समय में धराकर पुनः दो चार घड़ी पीछे बड़े कर लेना श्रीदाऊजी की आज्ञा पाकर श्रीपुरूषोत्तमजी महाराज ने दूसरे दिन श्रीजी का श्रृंगार किया और उस दिन उन्होंने जडाऊ मोजे धारण करवाये। श्रीदाऊजी महाराज भोग आने के समय में नित्य श्रीजी के दर्शन करने को पधारते उस समय दर्शन करके पुरुषोत्तमजी महाराज को यह आज्ञा की कि मोजा माला पीछे बडे कर लेना इतनी आज्ञा करके श्रीदाऊजी महाराज तो अपनी बैठक में पधारे पीछे माला बोली और राजभोग की आरती जब हो गयी। तब टोडा व्यास जो मुखिया था उससे कहा एक सहस्त्रमुद्रा तुम गुप्त लो और श्रीजी मोजा संध्या आरती तक अंगीकार कर लें तब मुखियाजी ने कहा

"जो महाराज श्रीदाऊजी महाराज का नियम है वे भोग के दर्शन नित्य करते है इससे शंखनाद होने के अनन्तर उत्थापन के दर्शन के समय बड़े करेंगे उसके पीछे किंवाड खोलेंगे" श्रीजी का अनवसर करके पुरुषोत्तमजी तो अपनी बैठक में पधारे और सब सेवक भी अपने–अपने घर गये। एक मुहूर्त तक तो श्रीजी ने राह देखी कि ये मोजा बडे कर देंगे। परंतु किसी ने मोजा बडे नहीं किये तब श्रीनाथजी उकताये और खमनोर में श्रीहरिरायजी भोजन करके अपनी बैठक में पोढ़े थे निद्रा आने लगी तब श्रीजी ने स्वप्न में आज्ञा की जो तुम शीघ्र आकर मोजा बडे करो तो मैं ब्रज में जाऊँ तब श्रीहरिरायजी चौंक के उठे। श्रीहरिरायजी के सब सवारी सिद्ध रहती सुखपाल की घुडवेल की बेलों की एक रथ हाथी की भी सदा रहती। उनमें से एक एक सवारी एक एक प्रहर में ड्योढ़ी पर आकर खड़ी होती। श्रीहरिरायजी ने उठकर पूछा "कौनसी सवारी खड़ी हैं" तब उद्धव खवास ने विनती की "महाराज घुडवेल जुती हुई खड़ी है" तब तत्काल श्रीहरिरायजी ने घुडवेल में विराजकर प्रस्थान किया एक घड़ी में आ गये बनास के ऊपर स्नान किया और अपरस में श्रीदाऊजी के पास पधार मंदिर की कूंची का झूमका मांगा श्रीहरिरायजी के प्रभाव को भी श्रीदाऊजी महाराज जानते थे अतः विचारा कि आज श्रीजी की कोई आज्ञा हुई है इससे कूंची का झूमका उनको दे दिया। श्रीहरिरायजी निज मंदिर में पधारे ताला खोला शंखनाद कराये और श्रीजी के पास जाकर मोजा बडे कर दिये और दण्डवत् करके टेरा लेकर बाहर के किंवाड मंगल करके आये और चाबी का झूमका श्रीदाऊजी महाराज की बैठक में पहुँचाकर श्रीहरिरायजी तो खमनोर पधारे तब पुरुषोत्तमजी को इस बात का बड़ा पश्चाताप हुआ। हमने मोजा क्यों रक्खे श्रीनाथजी को श्रम हुआ। तब श्रीदाऊजी महाराज ने व्यासजी को फटकारा और कहा तुमने मोजा क्यों रक्खे तुम यदि संकोच से श्रीगुसांईजी के बालकों को कुछ नहीं कह सकते हो तो हमसे कह दिया करो हम उनसे कहेंगे उनसे कहने का काम हमारा है।

१०३. श्रीगोवर्द्धननाथजी का शृंगार श्रीवल्लभजी के पुत्र श्रीव्रजरायजी ने किया

एक समय श्रीगोवर्द्धननाथजी का शृंगार श्रीवल्लभजी के पुत्र श्रीव्रजराजयी ने किया था श्रीजी के यहाँ मार्ग में गादी बिछती है उस पर चरणारविन्द रखकर पीछे पेंडे (मार्ग) में पधारते हैं उस दिन श्रीगुसांईजी के बालक तथा भीतरिया सब गादी बिछाना भूल गये। राजभोग आरती के पीछे जब अनवसर हो गये तब श्रीजी ने गंगाबाई को आज्ञा की कि "आज पेंडे की गादी बिछाना भूल गये है इसलिये मैं खड़ा हूँ" तब गंगाबाई ने श्रीनाथजी से विनती की बलिहारी यह बात तो भतीर की है मेरे बल की नहीं है आप यह बात तो हरिरायजी को जताइये तब श्रीनाथजी ने खमनोर में हरिरायजी

को जताया तुम जल्दी आकर पेंडे की गादी बिछवा जाओ। मैं खड़ा हूँ। तब श्रीहरिरायजी पधारे तब गंगाबाई ने भगवत् स्मरण किया और कहा कि आप यहाँ से स्नान कर अपरस के वस्त्र पहन कर शीघ्र जाइये लाला खड़ा है तब तत्काल स्नान कर अपरस के वस्त्र पहनकर श्रीहरिरायजी श्रीदाऊजी महाराज के पास से चाबी मंगवाकर मंदिर का ताला खोलकर श्रीजी को दण्डवत् कर गादी बिछाई और ताला मंगल करके श्रीहरिरायजी श्रीदाऊजी महाराज की बैठक में पधारे तब श्रीदाऊजी महाराज ने गादी बिछा दी उस पर श्रीहरिरायजी विराजे। तब श्रीहरिरायजी महाराज ने श्रीदाऊजी महाराज से कहा कि आप हमारे श्रीवल्लभ कुल में मुख्य हैं और श्रीजी की सेवा में भूल करें सो आपको शिक्षा देनी चाहिये आज पेंडे की गादी बिछाना भूल गये इससे श्रीजी दो घड़ी तक खड़े रहे और मुझे आकर जताया मैनें आकर गादी बिछाई श्रीजी वन को पधारे तब श्रीदाऊजी महाराज ने श्रीहरिरायजी से कहा जो पेंडा तो बिछा ही था छोटी गादी बिछती उसे भूल गये होंगे। मैं समझा दूंगा। मैं आपसे सहज एक प्रश्न करना चाहता हूँ आप बुरा न माने तो गादी बिछे बिना श्रीजी पेंडे के ऊपर चरणाविन्द न रक्खा और अनवसर में चोरासी कोस व्रजमण्डल में आप पधारते हैं तब सब स्थलों में श्रीजी चरणाविन्द में फिरते है। वहाँ कहाँ सब जगह गादी बिछी हुई है। तब श्रीहरिरायजी ने उत्तर दिया श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी से कहा है कि जो अब हम गादी बिछावें उसके ऊपर चरणारविन्द धरके पीछे पेंडे में पधारा करें श्रीगुसांईजी की मर्यादा का उल्लंघन न करके श्रीजी अपनी सेवा को अंगीकार करते हैं तुमने जो यह कहा कि ब्रजभूमि में श्रीजी बिना गादी के चरणारविन्द कैसे धरते हैं उसका उत्तर यह है कि ब्रजभूमि नवनीत से भी कोमल है और जहाँ जहाँ आप चरणारविन्द धरते हैं वहाँ भूमि में सात्विक भाव का आविर्भाव हो जाता है। ब्रजभूमि में प्रेमादर विद्यमान है तथा गुणातीत नन्दलालात्मक है व्रज कमलाकृति है जहाँ जहाँ श्रीजी चरण धरते हैं वहाँ वहाँ भूमि कमलपुष्पवत् कोमल हो जाती है। कमल के पुष्प के ऊपर चरणारविन्द धरने से जैसे सुख मिलता है वैसे व्रजभूमि पर चरणारविन्द धरने से श्रीजी को सुख होता है इसलिये श्रीशुकदेवजी ने श्रीभागवत् में कहा—

शरश्चन्द्रांशुसन्दोहध्वस्तदोषतमःशिवम्।
कृष्णाया हस्ततरलाचितकोमलावालुकम्।।

भा. स्कं १० अ. ३२ श्लोक १२

अतः श्रीगुसांईजी के मतानुसार अपने को भी श्रीजी की सेवा करनी चाहिये। श्रीगुसांईजी ने जिस जिस समय जैसी सेवा की है श्रीजी उसी उसी समय उसका अनुसंधान करते हैं। ''दास चत्रभुज प्रभु के निजमत चलत गिरधर'' यह कीर्तन की तुक कहा है यह बात सुनकर श्रीदाऊजी

महाराज बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि आप तो महानुभाव है तब श्रीहरिरायजी खमनोर पधारे और श्रीदामोदरजी महाराज भी उस दिन से श्रीजी की सेवा में बहुत सावधान रहते और कोई भी वल्लभकुल बालक शृंगार करते तो भी श्रीदाऊजी सब सेवा को देखते दो बार श्रीजी के मंदिर में दर्शन करने को भी पधारते कोई कोर कसर होती तो शिक्षा देते।

१०४. श्रीजी ने श्रीगोविन्ददास वैष्णव के द्वारा सूरज पोल कराने की आज्ञा दी

नन्दुवार का एक वैष्णव था। उसकी आरूढ़ दशा थी। वह अकेला ही व्रज में फिरता था। उसका नाम था गोविन्ददास। एक दिन कोकिला वन में श्याम तमाल के नीचे बैठा था। श्रीहरिरायजी के चरणारविन्द का ध्यान कर रहा था वह श्रीहरिरायजी का ही सेवक था। उसको देखकर लोग कहते कि यह तो पागल है उससे कोई विशेष बात या गोष्ठी नहीं करता। वह भी किसी से संभाषण नहीं करता। एक दिन श्रीजी कोकिला वन में अकस्मात् पधारे सो उस समय उसको दर्शन हुए। श्रीजी ने उस समय उस वैष्णव को आज्ञा की कि ''गोविन्ददास तू मेवाड़ में जाकर श्रीगिरिधरजी से कहना कि अन्नकूट लूटते समय मेरे मंदिर में अनाचार मिलता है इससे एक सूरजपोल बनवाओं वहाँ से होकर सब निकलेंगे'' तब उस वैष्णव ने विनती की महाराज मेरा कहना वहाँ कौन मानेगा तब श्रीनाथजी ने आज्ञा की ''श्रीगिरिधारीजी तेरी बात मानेंगे। तू जल्दी जाकर कहना।'' तब वह गोविन्ददास शीघ्र ही श्रीजीद्वार आया और श्रीगिरिधारीजी महाराज से विनती की महाराज श्रीनाथजी ने ऐसी आज्ञा की है आपका नाम लिया है तब यह सुनकर श्रीगिरिधारीजी तो वैष्णव के प्रभाव को जानते हैं गद् गद् कण्ठ होकर वैष्णव को आज्ञा की कि श्रीनाथजी मेरा नाम श्रीगिरिधारी ऐसा जनते हैं दो तीन बार श्रीगिरिधारीजी ने यह बात वैष्णव के मुख से कहलवाई उसके पीछे श्रीविट्ठलरायजी महाराज से श्रीगिरिधारीजी ने विनती की तब श्रीविट्ठलरायजी ने आज्ञा दी कि भाई आजकल कलियुग है यदि कोई पाखण्ड करके कोई कहता है तो मानना नहीं चाहिये। श्रीजी हमको आज्ञा करेंगे तब जो बात होगी करेंगे। तब श्रीगिरिधारीजी तो चुप हो गये और अपनी बैठक में पधार गये। जब पन्द्रह दिन अन्नकूट के बाकी रहे तब रात्रि की पिछली प्रहर में श्रीविट्ठलरायजी महाराज को स्वप्न में श्रीजी ने आज्ञा दी कि तुमने उस वैष्णव की बात झूठी मानी किंतु जब सूरजपोल बनेगी तब अन्नकूट अरोगूंगा यह आज्ञा कर निज मंदिर में पधारे। श्रीविट्ठलरायजी भी तत्क्षण जगे श्रीगिरिधारीजी को बुलाया और आज्ञा की कि वह वैष्णव सच्चा है आज हमको श्रीजी ने स्वप्न में आज्ञा दी है अब हमको पन्द्रह दिन में सूरजपोल सिद्ध करवानी है। पीछे उस्ता को बुलाकर पन्द्रह दिन में सूरजपोल सिद्ध करने की आज्ञा की तब सूरजपोल सिद्ध हुई

तब श्रीजी ने अन्नकूट अरोगा इसलिये प्रतिवर्ष अन्नकूट के दिन सूरजपोल खुलती है।

१०५. श्रीजी ने गोपालदास भण्डारी को दर्शन देकर लीला में अंगीकार किया

एक समय श्रीजी के उत्सव का समय था उस दिन बालभोग में कोई सामग्री पुष्कल धरी जाती थी पहले दिन में उसे तैयार करते दूसरे दिन राजभोग में अरोगते। उस दिन बालभोगिया को तो याद थी परंतु एक खासा भण्डारी गोपालदास था उसने सामग्री का सामान नहीं भेजा और कहा कि जब कल होगी तब तुम सामान ले लेना। जब रात्रि का पिछला प्रहर शेष रहा तब श्रीजी एक लाल छड़ी हाथ में लेकर गोपालदास भण्डारी के पास पधारे और उसके ऊपर छड़ी का एक प्रहार किया और आज्ञा की तेने हमारे लिये आज बालभोग में सामग्री क्यों नहीं भेजी उस वस्तु को सिद्ध करते समय बहुत समय लगता है जब कल आवेगी तो राजभोग में विलम्ब हो जायेगा। इतने में गोपालदास भण्डारी जागकर देखता है तो श्रीनाथजी स्वयं खड़े हैं तब उठा और उठकर यह कहा "मुझे चरण छुवाता जा" श्रीजी वहाँ से भागे वह गोपालदास दौड़कर चला पोल तक आया तो पोल के किंवाड मंगल थे। श्रीनाथजी तो मंदिर में पधार गये। इतने तो सिंहपोल के किंवाड पर अपना सिर पटका और पुकारा "मुझे चरण छुवाता जा" इस प्रकार जब कहा तो रायगोवर्द्धन नाम का एक सिंह पोलिया था उसने उठकर किंवाड खोले और पूछा तू किंवाड पर सिर क्यों पछाड़ता है। तेने क्या देखा तब उसने कहा "एक लड़का मंदिर में भाग गया है मैं अभी उसके चरण छूने जाऊँगा। तब सिंह पोलिया ने उसे पकड़कर बिठा दिया। परंतु वह तो पागल हो गया बार–बार यही कहता। "ओ लड़के मुझे चरण छुवाता जा" आठो प्रहर बार–बार उसकी यही रट लगी रहती। अन्न जल त्याग दिया। यह बात श्रीदाऊजी महाराज ने सुनी तो उसको एक कोठरी में बिठा दिया और एक मनुष्य को उसकी सेवा में नियुक्त कर दिया यह गोपालदास उन्नीस दिन तक जिया। पीछे श्रीनाथजी के दर्शन हुए। तब तक उसको अन्न जल की एवं निद्रा की कोई बाधा नहीं हुई। केवल यही रट लगी रही "ओ लड़के मुझे चरण छुवाता जा" ऐसा करते हुए उसके प्राण छूट गये और श्रीजी की लीला में सद्यः प्रविष्ट हो गया।

१०६. श्रीनाथजी के सेवक माधवदास देसाई

श्रीगोवर्द्धननाथजी का सेवक माधवदास मांगरोल में रहता था उसका पहले भगवानदास नाम था। उसे बदलकर श्रीगोकुलनाथजी ने उसका नाम माधवदास धर दिया। एक करोड़ सोने की मुद्रा उसके पास थी। श्रीजी के दर्शन में उसे बहुत आसक्ति थी। तीसरे वर्ष हजार मनुष्यों कोसाथ में

लेकर वह माधवदास श्रीनाथजी के दर्शन के लिये श्रीजीद्वार आता था जिसके पास खर्चा नहीं होता उसको मार्ग में खर्चा स्वयं देता था। पूरे अधिक मास तक श्रीजी के दर्शन करता। जिस दिन से अपने घर से श्रीजी के दर्शन के लिये निकलता उसी दिन से अन्न छोड़ देता केवल दुग्धपान करता। उस वैष्णव को श्रीजी ने स्वप्न में यह आज्ञा की कि तू एक लक्ष मुद्रा के स्त्री के पहरने के आभूषण नख से लगाकर शिखा पर्यन्त बनवा कर एक बन्टे में धरकर जब तू इस वर्ष दर्शन करने आवे तब ले आना और लाकर मेरे भेंट कर देना। तब उस वैष्णव ने १७४२ के वर्ष में जब दो चैत्र थे फाल्गुन में आकर डोल के दर्शन किये और वह बन्टा लाकर श्रीजी को भेंट किया। तब एक सेवक ने दाऊजी महाराज को खबर दी कि एक वैष्णव ने लक्षमुद्रा का अलंकार बनवाकर भेंट किया है तब दाऊजी महाराज ने उस बन्टे को अपने पास मंगवा लिया और बड़े यत्न से उसे रक्खा। उनने जाना कि इसमें कुछ कारण है। जब रात्रि की पिछली प्रहर बाकी रही उस समय श्रीगोवर्द्धननाथजी ने श्रीदाऊजी महाराज को स्वप्न में कहा कि यह जो अलंकार का बन्टा आया है जिसमें नख से शिखा तक के स्त्री के आभूषण है इन्हें गंगाबाई को पहराओ वह पहर कर भोग के दर्शनों में आवे श्रीनाथजी ने गंगाबाई को भी ऐसी ही आज्ञा दी जो तू अलंकार पहर कर भोग के दर्शन करने को आना। तब गंगाबाई ने वैसा ही किया। एक दिन दर्शन किये और वैसा ही अलंकार पहना श्रीनाथजी ने दर्शन किये और यह आज्ञा दी कि यह गहना सब शैय्या मंदिर के मूढा पर स्थापन करो तब ऐसा ही हुआ। इस तरह के श्रीगोवर्द्धननाथजी के अनेक चरित्र हैं उन्हें कहाँ तक लिखें श्रीआचार्यजी महाप्रभु की कृपा से स्वकियों को इसका अनुभव होता है।

इति श्रीनाथजी की प्राकट्य वार्ता संपूर्ण।

१०७. श्रीमद्वल्लभाचार्य का संक्षिप्त जीवन चरित

श्रीमद्वेदव्यास विष्णुस्वामिमतानुवर्त्त्य अखण्डभूमण्डलाचार्य जगद्गुरू महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्यजी के पूर्वज श्रीयज्ञनारायण भट्टजी सोमयाजी त्रिप्रवर भारद्वाजगोत्र तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्बसूत्री वेल्लनाटी अप्रतिग्रही षट्शास्त्रज्ञ श्रीगोपालोपासक स्तम्भाद्रि के समीप कुंभकर नगरी के निवासी थे। जिनके निवास मंदिर में पंचाग्नि विराजमान रही। जिन्होंने शत सोमयज्ञ का संकल्प इस प्रकार किया था। मैं या मेरे वंशज इसकी पूर्ति करेंगे।

पश्चात् (यज्ञनारायण भट्टजी) ३१ एकत्रिंशत् यज्ञ निर्विघ्न समाप्त कर पूर्ण यशस्वी हो भवद्धाम पधारे। इनके योग्य पुत्र श्रीगंगाधर सोमयाजी बड़े ही पवित्रात्मा हुए जिन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना तथा २७ सत्ताईस सोमयज्ञ किये। पश्चात् अपने योग्य पुत्र गणपति जी सोमयाजी को यज्ञभार

समर्पण कर स्वयं गोलोक वासी हुए।

अनन्तर सोमयाजी गणपति भट्टजी ने तंत्रनिग्रह आदि विविध ग्रंथरचना के साथ ३२ सोमयज्ञ सांङोपांङ् समाप्त किये। इनके योग्यपुत्र वल्लभभट्टजी ने भी कई एक मनोहर ग्रंथ रचना तथा ५ सोमयज्ञ किये। वल्लभभट्टजी के पुत्र श्रीलक्ष्मण भट्टजी बड़े ही उदारचेता तेजस्वी हुए और बाल्यावस्था में ही कुशाग्रबुद्धि होने से जिन्होंने चारों वेद पूर्व उत्तर मीमांसा धर्मशास्त्र तथा अन्यान्यशास्त्रों में प्रवीणता प्राप्त की और ५ सोमयज्ञ कर अपने पूज्य वृद्ध पितामह के संकल्प की पूर्ति की। आपका पाँचवां सोमयज्ञ संवत् १५३३ चैत्र शुल्क ६ सोमवार पुष्य नक्षत्र में प्रारंभ हुआ। यज्ञ समाप्ति काल में आकाशवाणी हुई कि तुम्हारे वंश में सौ सोमयज्ञ पूर्ण हुए हैं। इसलिये अब तुम्हारे यहाँ भगवान् का अवतार होगा। यज्ञ की समाप्ति कर श्रीलक्ष्मणभट्टजी सकुटुम्ब तीर्थराज प्रयाग की यात्रा करते शंकर दीक्षित नाम एक महात्मा को साथ ले काशी पधारे और कुछ काल निवास करने पर इनकी धर्मपत्नी ''इल्लमागारूजी'' गर्भवती हुई। उसी समय वहाँ दण्डी और म्लेच्छों में उपद्रव प्रारंभ हुआ। जिसमें वहाँ के रहने वाले जहाँ–जहाँ भाग निकले। श्रीलक्ष्मणभट्टजी वहाँ से अपनी पत्नी के साथ चले और चम्पारण्य में पहुँच गये। इस समय ''इल्लमागारूजी'' को मार्गाश्रम से गर्भवेदना हुई और एक शमीवृक्ष की छाया में बैठ गई। वहीं पर जरायु में लिपटा हुआ साप्तमासिक पुत्र उत्पन्न हुआ। मृतक समझकर उसे उसी वृक्ष के नीचे अपनी उत्तरीय वस्त्र में शमी पत्रों से आच्छादित कर आगे को पधारी और पति को सारा वृत्तांत सुनाया और समीप के चतुर्भद्रपुर (चौंरा) ग्राम में विश्राम करने लगी। रात्रि में भट्टजी को स्वप्न हुआ जिसमें भगवान् ने आज्ञा की कि तुम्हारे घर में अवतीर्ण हुआ हूँ। द्वितीय दिन ही सुनने में आया कि काशी में शांति हो रही है। पुनः पूर्व आगत मार्ग से ही काशी को लौटे चम्पारण्य में आये वहाँ एक शमीवृक्ष के नीचे अग्निमण्डल में अपना अङ्गुष्ठामृत पान करता हुआ दिव्य बालक देखने में आया। उसे देख माता के स्तन से दुग्धधारा बहने लगी माता को देख अग्निदेव ने मार्ग छोड़ दिया। ''इल्लमागारूजी'' ने अत्यन्त प्रेम से अपने उस पुत्र को गोद में उठा लिया और बार–बार मुख चुम्बन कर पति की गोद में दे दिया। उस दिन वैशाख कृष्ण 11 रविवार संवत् १५३५ था। श्रीलक्ष्मणभट्टजी मन में पूर्ण आनन्दित हो अपने पुत्र को ले काशी पधारे। वहाँ जातकर्म संस्कार के पश्चात् पुत्र का नाम ''श्रीवल्लभ'' रक्खा। सातवें वर्ष में यज्ञोपवीत संस्कार करके गुरुकुल में पढ़ने को बैठाये। इस पुत्र ने चारों ही वेद और षट्शास्त्रों को पढ़ लिया। यह देख पिता को विश्वास हुआ कि यह बालक भगवान् का ही अवतार है। कुछ काल के अनन्तर लक्ष्मणभट्टजी भगवद्धाम पधारे। फिर ११वें वर्ष में श्रीवल्लभाचार्यजी दक्षिण में पधारे वहाँ विद्यानगर में कृष्णदेव राजा के यहाँ विद्वानों में बड़ा भारी विवाद चल रहा था जिसमें स्मार्त्त अपने को

ड़े और वैष्णव अपने को बड़ा बता रहे थे। इसी सभा में अनेक देशों के प्रतिष्ठित विद्वान् भी पधारे थे। श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपने मामा से सभा का विषय सुनकर उस सभा में पधारे। आपका अलौकिक तेज देख सभी सभा सद मुग्ध हो गये राजा ने आपको बहुमानपुरः सर सभा में उच्च आसन पर बैठाया। आपने वैष्णवों की ओर से "ब्रह्म सधर्मक है" इस विषय पर स्मार्तों से अट्ठाईस दिन तक शास्त्रार्थ किया। श्रीवल्लभाचार्य की प्रबलश्रुति स्मृति प्रमाणान्वित युक्तियों से प्रतिवादिगण निरुत्तर हो गये। इसलिये कृष्णदेव राजा ने प्रसन्न होकर आपको कनकाभिषेक कराने के लिए चतुरंगिणी सेना प्रभृति राजचिह्न सहित मण्डप में पधराया। जहाँ बड़े-बड़े आचार्य विद्वान् वादी प्रतिवादी सभी एकत्रित हुए। उन सबों की अनुमति से सम्मानपूर्वक आपका अभिषेक हुआ। राजा ने छत्र चामरादिक चिह्न समर्पण किये और रामानुज, माध्व, निम्बार्क आचार्यों ने विष्णुस्वामी संप्रदाय के आचार्य "हरिस्वामी" शेषस्वामीजी के हाथों से आचार्य साम्राज्य का तिलक कराया। राजा ने तथा सब आचार्यों ने भी तिलक किया तथा अन्य लोगों ने भी तिलक किया आपको "श्रीमद्वेव्यास विष्णुस्वामी आचार्य उपाधि से विभूषित किया।" राजा ने सकुटुम्ब शिष्य होने की प्रार्थना की उन सब को श्रीवल्लभाचार्य चरण से अष्टाक्षर शरण मंत्र के साथ तुलसी की माला दी। राजा ने मोहरों से भरा थाल भेंट किया उसमें से आपने ७ मोहर ही ली और कहा कि इसमें से जितना दैवी द्रव्य था वह मैंने ले लिया अब शेष द्रव्य को बांट दीजिये। पश्चात् आचार्यजी अपने मामा के यहाँ पधारे। वहाँ विष्णुस्वामी संप्रदाय के आचार्य योगीराज श्रीबिल्वमंलाचार्यजी आपके पास पधारे। आपने उनका स्वागत किया। अनन्तर योगीराज ने कहा कि आचार्य द्राविड विष्णुस्वामीजी से सात सौ आचार्य हो चुके थे। उनके अनन्तर जो राजविष्णुस्वामी हुए उन्होंने मुझे संप्रदाय का भार देने के समय कहा था इस संप्रदाय को तुम चलाओ पश्चात् श्रीवल्लभाचार्य नामक साक्षात् भगवद्अवतार होंगे जो इस संप्रदाय का उद्धार करेंगे। तुम उन्हें इस संप्रदाय का उपदेश दे दीक्षित करना सो मैं आपके पास आया हूँ आप इस संप्रदाय को ग्रहण करें। पश्चात् बिल्वमङ्गलजी ने दीक्षा दी। दीक्षा देकर अंतर्ध्यान हो गये। इसके अनन्तर श्रीवल्लभाचार्यजी ने तीन बार पृथ्वी परिक्रमा (तीर्थयात्रा) की जिसका वर्णन विस्तार से वल्लभ दिग्विजय आदि ग्रंथों में है। तीर्थयात्रा में आपका अनेक आचार्यों के साथ समागम हुआ उन्होंने आपका सत्कार आचार्यवत् किया। जहाँ तहां अनेक दुर्वादियों को परास्त किया और अखिल वेद सम्मत शुद्धाद्वैत संप्रदाय का प्रचार किया। आपका विवाह गोपाण्डुरङ्गविट्ठलनाथजी की आज्ञा से काशी के निवासी तैलङ्ग ब्राह्मण मधुमङ्गलजी की पुत्री श्रीमहालक्ष्मीजी से हुआ था। विवाह के अनन्तर आपने अग्निहोत्र ग्रहण किया और सोमयज्ञ किये। कर्ममार्ग तथा भक्तिमार्ग का पूर्ण प्रचार किया। पूर्व में तो आप शरणाष्टाक्षर तथा गोपालमंत्र की दीक्षा देते थे। फिर भवदाज्ञानुसार गद्यमंत्र (ब्रह्मसंबंध) का भी उपदेश करने लगे। पृथ्वी परिक्रमा

करते समय आपको १५४६ में ऐसी भगवदाज्ञा हुई कि व्रज में श्रीगोवर्द्धन पर्वत की कन्दरा में
विराजमान हूँ तुम यहाँ शीघ्र आकर मुझे प्रकट करो। आप वहाँ पधारे वहाँ के व्रजवासियों ने क
श्रीगोवर्द्धन पर्वत पर कोई देव है जिसकी ऊर्ध्वभुजा सं. १४६६ में प्रकट हुई थी और मुखारविन्द
दर्शन १५३५ वैशाख वदि एकादशी को हुए। यह सुन आप पर्वत के ऊपर पधारे वहाँ वे ही देव दे
श्रीगोवर्द्धननाथजी कन्दरा में से निकलकर प्रकट हुए। आपसे मिलाप हुआ।

१०८. श्रीगोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य का प्रमाण गर्ग संहिता में वर्णित है

"येन रूपेण कृष्णेन" इत्यादि १० श्लोक प्राकट्य पूर्व पृष्ठ में छपे है। अनन्तर आप
श्रीगोवर्द्धननाथजी को छोटे से मंदिर में विराजमान किया। पश्चात् आप पृथ्वी परिक्रमा को पधारे
संवत् १५७६ वैशाख शुक्ल ३ को एक बड़ा मंदिर सिद्ध हुआ उसमें श्रीनाथजी को विराजमान किय
और प्रभुसेवा का विस्तार से प्रचार किया।

श्रीवल्लभाचार्य के दो पुत्र हुए। प्रथम पुत्र श्रीगोपीनाथजी दीक्षित का जन्म १५६७ आश्वि
वदि १२ को हुआ। द्वितीय पुत्र श्रीविट्ठलनाथजी (श्रीगुसांईजी) का जन्म १५७२ पौष वदि ९ को हुआ
आपने बहुत समय तक प्रयाग के समीप अडेलग्राम में निवास किया था। तथा कुछ समय काशी
पास चरणाद्रि (चरणाट) में भी विराजे थे। आपने पूर्व मीमांसा के १२ अध्यायों का भाष्य तथा व्या
सूत्र, भाष्य, अणुभाष्य तथा तत्वार्थदीपनिबंध, श्रीभागवत की सूक्ष्म टीका तथा श्रीसुबोधिनी
षोड्षग्रंथ, पत्रावलम्बन श्री पुरुषोत्तमसहस्त्रनाम प्रभृति अनेक ग्रंथ प्रकाशित किये। शुद्धाद्वैत संप्रदा
का पूर्ण रीति से प्रचार किया। अंत में आप त्रिखंड संन्यास ग्रहण कर काशीजी में हनुमान घाट प
४० दिवस पर्यन्त विराजे। मौनव्रत धारण कर अनशन व्रत से रहे संवत् १५८७ आषाढ सुदि २ पु
नक्षत्र में सभी के सामने आप श्रीगङ्गाजी में पधारकर दिव्य तेजः पुंज होकर भगवद्धाम को पधारे
५२ वर्ष २ मास ७ दिन पर्यन्त आप भूतल पर विराजे।

।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्याणां संक्षिप्त जीवन चरितम्।

भारतवर्ष
महाप्रभु वल्लभाचार्य
का भारत भ्रमण
श्रीनगर
जम्मू कश्मीर
झेलम
हिमाचल प्रदेश
शिमला
व्यास
सतलज
पंजाब
कुरुक्षेत्र
हरियाणा
जमनोत्री
गंगोत्री
केदारनाथ
बद्रीकाश्रम
व्यासआश्रम
हरिद्वार
आगरा
दिल्ली
उत्तर प्रदेश
मथुरा
नेमिषारण्य
अयोध्या
कन्नौज
हनुमानघाट
चित्रकूट
प्रयाग
नेपाल
काठमांडू
तिब्बत
ब्रह्मपुत्र
भूटान
सिक्किम
जनकपुर
हरिहर क्षेत्र
हाजीपुर
बिहार
गया
वैद्यनाथ
पश्चिमी बंगाल
गंगासागर
दामोदरदास हरमानी
गोकुल ठुकरानी घाट
लोहागर
व्रजमंडल
राजस्थान
जयपुर
धवलपुर
धोलपुर
गोपालपुर
पुष्कर
रहुगणपुर
चित्तौड़
नाथद्वारा
गुजरात
सिद्धपुर
खेरालु
अर्हत
पहन
मध्य प्रदेश
उज्जैन
भोपाल
माहिष्मती ओंकारेश्वर
अमर कंटक
रायपुर
राजिम
चम्पारण्य
उड़ीसा
जंगलाधपुरी
महेन्द्र
नासिक
महाराष्ट्र
मुम्बई
पहरपुर
आंध्र प्रदेश
सप्त गोदावरी
कांकर बाड़
विजयवाड़ा
मंगल प्रस्थ
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
गोआ
लोहागढ़
गोकर्ण
कृष्णा नदी की बैठक
तृप्ती
श्रृंगेरी
पंपा सरोवर
कर्नाटक
लक्ष्मण
बालाजी
मद्रास
कांची
उडीपी
सुब्रमण्यम
मैसूर
विष्णु
तमिलनाड
चिदम्बर
कुम्भ कोणम
श्रीरंग
मन्नार गुडी
(दक्षिण द्वारका)
तंजाबुर
मदुरा
कोचीन
केरल
जर्नादन
त्रिवेन्द्रम
पद्मनाभ
कन्याकुमारी
दर्भशयन
श्रीलंका
संकेत
मन्दिर मण्डल नाथद्वारा अधिनस्थ श्री महाप्रभुजी की बैठकें
महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी की चौरासी बैठकें
श्रीनाथजी के भण्डारों की सूची
श्रीनाथजी के भंडारों की सूची
1. उदयपुर
2. कोटा
3. झालावाड
4. श्योपुर
5. मथुरा
6. बनारस
7. मुम्बई
8. बडौदा
9. सूरत
10. अहमदाबाद
11. पोरबन्दर
12. जामनगर
13. कलकत्ता
मन्दिर मण्डल नाथद्वारा अधिनस्थ
श्री महाप्रभु जी की बैठकें
बैठकस्थान
चन्द्रसरोवर मथुरा
बच्छवन मथुरा
राधाकुंड में 3 मथुरा
चीर घाट मथुरा
गोकुल मथुरा
गोकुल दादाहर मथुरा
गोकुल –
–ठुकरानीघाट मथुरा
मुखार बिन्द जतीपुरा
गुलाल कुंड जतीपुरा
वृन्दावन मथुरा
कुरुक्षेत्र उ.प्र.
आगरा उ.प्र.
हरिद्वारा उ.प्र.
चित्रकूट उ.प्र.
पंचगंगा बनारस
बैठकस्थान
हनुमान घाट बनारस
जेतन बड बनारस
हाजीपुर पटना
माधवपुर पोरबन्दर
खंभालिया गुजरात
पिंड तारक जूनागढ
मूल गोमती पोरबन्दर
भेट द्वारका पोरबन्दर
गोपी तालाब पोरबन्दर
गुप्त प्रयाग जूनागढ
डाकोर नरोड़ा
सिद्धपुर नरोड़ा
गोपीपुरा सूरत
अश्वनीकुमार सूरत
मानसरोवर भुज
भरूच गुजरात

संशोधक - त्रिपाठी यदुनन्दन श्री नारायण जी शास्त्री

पुस्तक प्राप्ति स्थान : श्रीगोवर्धन पुस्तकालय,
मोतीमहल चौक, श्रीनाथ जी का मन्दिर, नाथद्वारा - 313301 (राज.)